ओ३म्

पाक्षिक

परोपकारी

ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद

परोपकारिणी

वर्ष - ५४ अंक - ८ महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा का मुखपत्र अप्रैल (द्वितीय) २०१३

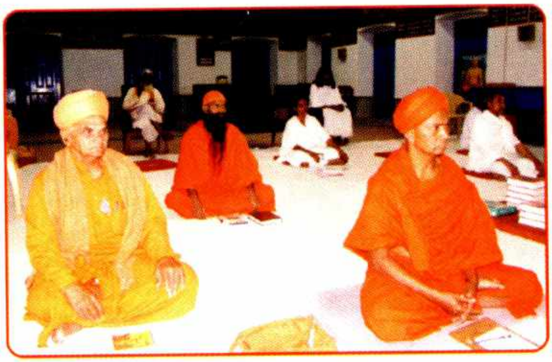

डॉ. धर्मवीर व आचार्य सत्यजित्

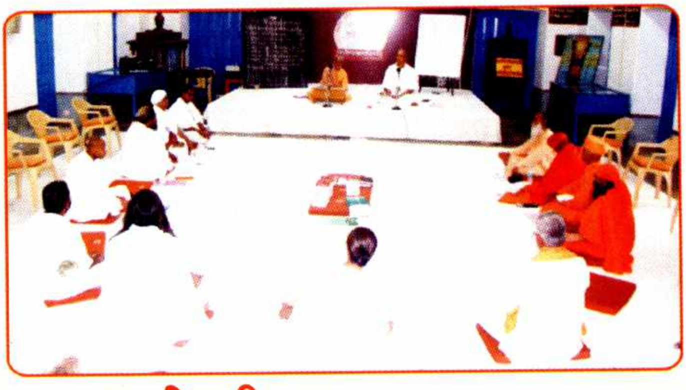

ध्यान गोष्ठी–३ (१३-१५ मार्च २०१३)

आचार्य ज्ञानेश्वर व आचार्य आशीष

स्वामी अमृतानन्द व आचार्य सत्यजित्

ध्यान गोष्ठी–३ (१३-१५ मार्च २०१३)

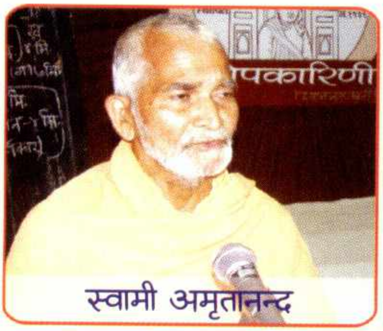
स्वामी अमृतानन्द

स्वामी ऋतस्पति

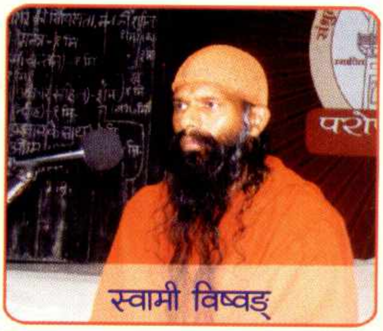
स्वामी विष्वङ्

स्वामी सत्यानन्द

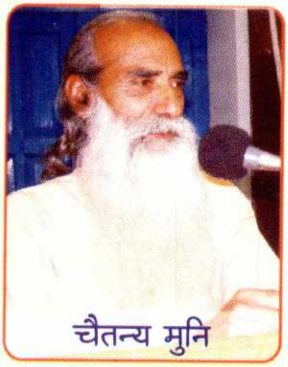
चैतन्य मुनि

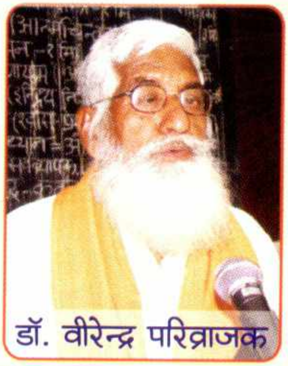
डॉ. वीरेन्द्र परिव्राजक

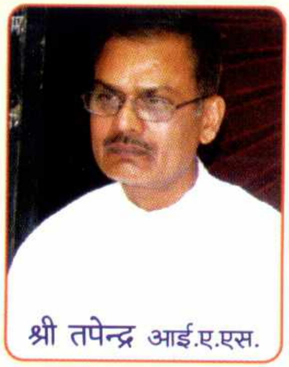
श्री तपेन्द्र आई.ए.एस.

आचार्य सत्यजित्

आचार्य आशीष

आचार्य सत्यव्रत

आचार्य सोमदेव

आचार्या शीतल

आचार्य ओमप्रकाश

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ५४ अंक : ०८
दयानन्दाब्द: १८९
विक्रम संवत्: चैत्र शुक्ल, २०७०
कलि संवत्: ५११४
सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११४

सम्पादक
प्रो. धर्मवीर

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

-परोपकारी का शुल्क-

भारत में

वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु., **त्रिवार्षिक**-५८० रु., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-२००० रु.।

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस. डालर, **द्विवार्षिक**-९५ पा./१५२ डा., **त्रिवार्षिक**-१४० पा./२२५ डा., **आजीवन**-(=१५ वर्ष)-५०० पा./८०० डा.।

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२११७०

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

अप्रैल द्वितीय २०१३

अनुक्रम

१. वैश्वीकरण=देश की जनता के मन...	सम्पादकीय	०४
२. कामना का स्वरूप	स्वामी विष्वङ्	०७
३. महर्षि दयानन्द की वेदभाष्य शैली	डॉ. धर्मवीर	०८
४. कुछ तड़प-कुछ झड़प	राजेन्द्र जिज्ञासु	११
५. समस्याओं का समाधान-वैदिक धर्म	रत्नप्रकाश	१६
६. ऋते ज्ञानान्न मुक्ति:	पुरुषोत्तम आर्य	२०
७. मॉरिशस आर्यसमाज आंदोलन........	रणजीत पांचाले	२३
८. भावजगत से अपेक्षित सहयोग........	अजय शुक्ला	२५
९. सुख के चाहक तीन प्रकार के लोग	कमलेश कुमार	२९
१०. सौ वर्षों तक कर्म करते हुए जीने...	कन्हैया लाल	३०
११. पाठकों के विचार		३२
१२. पाठकों की प्रतिक्रिया		३४
१३. संस्था समाचार		३७
१४. आर्यजगत् के समाचार		३९

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

- उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं -
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

वैश्वीकरण= देश की जनता के मन-मस्तिष्क पर नियन्त्रण।

वैश्वीकरण की इस चमक-दमक भरी दुनिया में क्या हो रहा है, कुछ समझ पाना बहुत कठिन है। एक आदमी कुछ समझ पाये इतने में तो दुनिया कहीं की कहीं चली जाती है। पहले तो वातावरण में पर्यावरण का विनाश, जल का संकट, अकाल जैसी बातों का भय दिखाकर उसके उपाय के रूप में जो योजना में कार्यक्रम हमारे सामने प्रस्तुत किये जाते हैं, उनका परिणाम सामने आने तक हम ठगे से रह जाते हैं, किंकर्त्तव्यविमूढ़ होकर सोचते हैं, हमने यथार्थ को समझने में कहाँ भूल की है। इस भागती-दौड़ती दुनिया में कभी लगता है कहीं कुछ गलत हो रहा है, परन्तु विश्वास नहीं होता। इतने बड़े लोग जो इतना बड़ा तन्त्र लेकर बैठे हैं, वे हमारे साथ, सामान्य जनता के साथ, देश के साथ धोखा कर सकते हैं?

यही वह वास्तविक बिन्दु है जिसे हमें खोजना है, इस चकाचौंध में हमारा शत्रु कौन है और कैसे हमें समाप्त करने पर तुला है। एक परिस्थिति का विश्लेषण करते हुए देखें। आप प्रजातन्त्र कहो, अधिनायकवाद कहो, सामूहिक नेतृत्व कहो- इस सबमें कोई अन्तर नहीं पड़ता, क्योंकि सबका परिणाम एक ही निकल रहा है। प्रजातन्त्र में प्रजा बड़ी है, परन्तु वह एक पार्टी को चुनती है, लगता है शासन पार्टी कर रही है, जबकि वास्तविकता यह है कि चार-पाँच लोग ही सरकार चलाते हैं। इतना ही नहीं उन चार-पाँच लोगों में केवल एक व्यक्ति ही मुख्य होता है, शेष लोग केवल उसकी इच्छा को आदेश मानकर उसका पालन करते हैं। यही बात सामूहिक नेतृत्व में देखी जा सकती है, होता वह है जो मुखिया चाहता है, शेष केवल उस बात को दोहरा देते हैं। जहाँ अधिनायकवाद होता है, करने वाले वही सब होते हैं, परन्तु कहने वाला एक ही होता है। अब विचार करें तो कहने को सब भिन्न ही नहीं विरोधी भी लगते हैं, परन्तु परिणाम वही निकलता है।

हम इस प्रक्रिया का परिणाम ध्यान में रखकर विचार करें। इन्हीं बातों को हम राजनीति में शासन करने वालों के समूह को अलग-अलग नामों से पुकारते हैं। किसी को पूंजीवाद, किसी को साम्यवाद, किसी को समाजवाद कहते हैं। लगता है सब एक-दूसरे से भिन्न और बिलकुल विरोधी हैं, परन्तु परिणाम देखेंगे तो आप चकित रह जायेंगे। ये सभी एक ही प्रयोजन को सिद्ध करने का प्रयास है। जो लोग पूंजीवाद में विश्वास करते हैं, वे समझते हैं इस व्यवस्था के अपनाने से वस्तुओं का उत्पादन होगा, कारखाने लगाने से सामान अधिक बनकर अधिक लोगों तक पहुँचने से अधिक लोग लाभान्वित होंगे और सुखी होंगे। आज हमें विचार करना होगा ये विचार हमें क्या हमारे राजनेता, हमारी सरकार, हमारे शिक्षक अथवा हमारे विचारक दे रहे हैं? हमें लग सकता है, ये बात ठीक हो, परन्तु ऐसा है नहीं। इसमें सबसे अधिक षड्यन्त्रपूर्ण भूमिका है संचार माध्यमों की। इनके अधिकारी न राजनेता है, न सरकार और न ही चिन्तक हैं। इनके स्वामी तो पूंजीपति लोग हैं। वे हमें कैसे चलना चाहिए यह नहीं सिखाते, वे हमें वैसे चलाते हैं, जैसा वे चलाना चाहते हैं। इस चलाने की पद्धति में मुख्य भूमिका पैसे की है। जिससे तकनीक व जानकारी जुटाई जाती है। उसको कैसे काम में लाना है। इसका निर्णय पूंजीपति करता है। सरकार, राजनेता, शिक्षक ये सब उनके कार्यकर्त्ता मात्र हैं। इनका अपना इनके पास कुछ भी नहीं है। इस कार्य की प्रक्रिया को समझना हमारे लिए इस कारण लाभदायक होगा कुछ लोग हमें गलत दिशा में कैसे ले जा रहे हैं। यह जानकारी लाभदायक होने के साथ आश्चर्यजनक भी है। जो लोग वैश्वीकरण की बात करते हैं उनके विचार और योजना के अनुसार सारा संसार एक शासन के अन्तर्गत आना चाहिए। इस वैश्वीकरण की प्रक्रिया में छोटे शक्तिशाली वर्ग, कुछ व्यक्ति जुटे हुए हैं, जो ऐसी संरचना कर रहे हैं। जिसके द्वारा इस योजना को क्रियान्वित किया जा सके। और नया विश्व बने जिसमें शासन का केन्द्र एक ही हो। इस योजना व विचार को क्रियान्वित करने में आज वे संस्थायें और संगठन लगे हैं, जिन्हें हम विश्व में समाज कल्याण के काम में लगा देख रहे हैं। वास्तव में सभी संगठन केवल वैश्वीकरण के एक मात्र उद्देश्य से, सारे विश्व में, पूरे समाज और सभी व्यक्तियों को केवल दास बनाने का कार्य कर रहे हैं। ये बड़े नाम जिनसे हम परिचित हैं, कुछ इस प्रकार है-संयुक्त राष्ट्र संघ, आई.एम.एफ., विश्व बैंक, नाटो, रायल इण्स्टीट्यूशन ऑफ इण्टरनेशनल अफेयर, कौन्सिल ऑफ फॉरेन रिलेशन, ट्राइलेटरल कमिशन, बड़े भवन निर्माता इत्यादि। ये वे सैंकड़ों-हजारों स्वयं सेवी संगठन हैं जो विश्व सरकार की कल्पना को साकार करने में आने वाली बाधा को दूर करने में जुटे हैं।

इतिहास का अवलोकन करने पर सब जगह यही स्थिति पाते हैं, एक छोटा सा वर्ग सत्ता को निर्देशित करता आया है। शेष जनता उनके आदेश निर्देशों का पालन करती रही है। ये कुछ कुलीन लोग सत्ता के केन्द्र में सदा देखे जा सकते हैं। सत्ता में राजा, रानियाँ, धनपति, धर्माधिकारी, पादरी, पुजारी इत्यादि लोग केवल सत्ता केन्द्र के सहायकों के रूप में कार्य करते रहते हैं। इसमें संचार साधनों की भूमिका भी महत्त्वपूर्ण है। इसी इतिहास को आज वैश्वीकरण की प्रक्रिया से दोहराया जा रहा है। क्योंकि यह मनुष्य के स्वभाव का अंग है।

आज की परिस्थिति में इनको पहचानना हो तो, राजा, रानियाँ, अन्तरराष्ट्रीय बैंक, सैनिक साजो-सामान बनाने वाले उद्योगपति, इनके नौकर (जिनको सभ्य भाषा में सी.ई.ओ. कहा जाता है), वैज्ञानिक, प्रोफेसर, कानूनविद्, स्वयंसेवी संस्थाओं के संचालक, राजनेता, संचार साधनों के स्वामी, ये सारे लोग मिलकर विश्व सरकार की कल्पना को साकार करने में सहयोग दे रहे हैं। ये सब मिलकर हर व्यक्ति को या तो खरीदना चाहते हैं या उसके विचारों को बदलकर अपने अनुकूल बनाने का प्रयास करते हैं। ये सारे लोग वह बात कहते हैं जो इनको कहने के लिए कहा गया है।

इस वैश्वीकरण के लिए आवश्यक है मनुष्य की अभिव्यक्ति के अधिकार को नियन्त्रित किया जाए। सोच को कुण्ठित किया जाए, जिससे उसके अन्दर असहमति का भाव समाप्त हो जाए या उठे नहीं, यदि उठे तो ऐसे कानून बनाये जायें, जिससे आपको नियन्त्रित किया जा सके। हो सकता है आपकी अभिव्यक्ति आपको आतंकवादी घोषित कर दे। जिससे आप सरकार और सरकार चलाने वालों का विरोध न कर सकें।

जो व्यवस्था हम पूंजीवाद में देखते हैं, अध्ययन करने पर वही व्यवस्था साम्यवाद में दिखाई देती है। वहाँ भी किसी को बोलने का अधिकार नहीं है। जो नेता ने कहा वही सबसे बड़ा सच है, उसे ही सबको स्वीकार करना अनिवार्य है। सम्पत्ति किसी की नहीं है, सारी सम्पत्ति राज्य की है, और राज्य के नाम पर, जो कुछ ही लोगों के हाथ में है। जो कुछ सोचना है, वैसे ही सोचना है, जैसा सोचने के लिए कहा जाता है। इस तरह सुनियोजित नियन्त्रित समाज की रचना है-**साम्यवाद**। नियन्त्रित व निर्देशित उद्देश्य के अनुसार नियोजित समाज का नाम है-**पूंजीवाद**। फिर दोनों में अन्तर ही कहाँ है। आज के समझदार लोगों ने इन दोनों पद्धतियों को अपने उद्देश्य के अनुसार मिलाकर वैश्वीकरण की संरचना की है। दोनों पद्धतियों में आने वाली रुकावटें सोचे-समझे तरीके से दूर करके दोनों में जो उद्देश्य निहित है उसे विश्व कल्याण करने वाले संगठन में यथावत् रखा गया है या दूसरे शब्दों में कहें तो दोनों पद्धतियों के समान उद्देश्य को प्राप्त करने की यह एक नई पद्धति और नया प्रयास है, जिसे नाम दिया गया है-**वैश्वीकरण**। दोनों ही स्थानों पर एक सामान्य मनुष्य का जन्म इन शासकों की मात्र सेवा करने के लिए हुआ है। इनकी सेवा ही विश्व की सेवा है, क्योंकि विश्व पर इनका ही शासन है। हमारे पैदा होने से लेकर हमारी स्कूली शिक्षा से इस सेवा कार्य का प्रारम्भ होता है, यह सेवा करने की शिक्षा हमें पीढ़ी दर पीढ़ी सिखाई जा रही है। यही सामान्य जनता का भविष्य है। इस शिक्षा और प्रचार की सबसे बड़ी सोच मनुष्य को उसके मौलिक सोच से अलग कर देना और वही सोचना-सिखाना जिसे सोचने के लिए निर्देशित किया जाए। वे विचार दे नहीं सकते, वे विचार दोहरा सकते हैं।

वैश्वीकरण का मूल मन्त्र है, जनसंख्या को घटाकर इस धरती की सेवा की जाये। इस पृथ्वी को 'मदर अर्थ' कहने के पीछे उनकी सोची-समझी चाल है, वे जानते हैं, धर्म के चलने के पीछे भावुकता मुख्य आधार है और इस विचार से उनकी बात को भावनात्मक आधार मिल जाता है। धर्म के माध्यम से मनुष्य से कुछ भी करवाना आसान होता है। इसलिए इस वैश्विक समाज की संरचना में एक वैश्विक धर्म की स्थापना की जा रही है, जो पृथ्वी की पूजा पर आधारित होगा। और एक मनुष्य का जन्म इस पृथ्वी माता की सेवा करने के लिए ही हुआ है। इस धर्म की सेवा करने वाले वैज्ञानिक विशेषज्ञ, जो इस पृथ्वी धर्म की सेवा में लगे हैं, वे चाहे कितने ही बड़े पद पर प्रतिष्ठित हों, कितने ही सम्पन्न हों, किसी योग्यता के हों उन्हें सदा याद रखना चाहिए कि वे इस ऊँचाई पर इसलिए हैं कि उन्हें बहुत बड़ी अनुदान राशि इन पूंजीपति संस्थाओं और व्यक्तियों से मिलती है। इस नवीनतम व्यवस्था के शिखर पर पुरातन सम्पन्नता लिए हुए वर्ग का ही अधिकार है। शताब्दियों से वे धन का संग्रह करते हुए दिन-प्रतिदिन शक्तिशाली बनते जा रहे हैं। वे इस ऊँचाई पर बैठकर वैज्ञानिक समाज की रचना कर रहे हैं, यह उनके समाज को अपनी दिशा में चलाने का एक हथियार है। ऐसा हथियार जो मनुष्य के मस्तिष्क को नियन्त्रित करता है। वे शिखर पर बैठे लोग सारे समाज को इसी दिशा में ले जा रहे हैं। वे समाज के संरक्षक हैं, समाज उनकी योजना में नियोजित, नियन्त्रित और सुरक्षित है। किसी देश की सरकार तो इन सरकारों की चाकरी मात्र करती हैं, वे दास हैं उसमें काम करने वाले मात्र दासानुदास हैं।

एक दिन रुड़की की गंगनहर के किनारे घूमते हुए जानकारी मिली यह नहर विश्व बैंक द्वारा दी गई ऋण की सहायता से बनी है। लगा इतना बड़ा कार्य, इतना सारा धन कोई यूं ही तो नहीं देता। बैंक परोपकार करने के लिए तो नहीं बने। फिर यह उदारता क्यों? इसका उत्तर अपने नगर के बनिये की बात में था। एक किसान ने सेठ से कुछ रुपये उधार लिए थे, काम हो गया किसान के पास कुछ पैसे भी हो गये किसान सेठ के पास पैसे लौटाने लगा तो सेठ को अच्छा नहीं लगा, उसने किसान से कहा पैसे रखो लौटाने की चिन्ता मत करो, पैसे चाहिए तो और भी ले जाओ। जो धर्म इस सेठ की बातों में है, वही धर्म विश्व बैंक की नीतियों में है। सेठ किसान से पैसे नहीं लेना चाहता क्योंकि उन पैसों के बदले में उसका सब कुछ लिया जा सकता है। विश्व बैंक हो या और कोई बैंक वह आपकी सहायता अपनी पूंजी बढ़ाने के लिए करता है। भविष्य में अवसर मिले तो आपको अपना दास बना लेना चाहता है। मनुष्य व्यक्तिगत ऋण तो चुकाता है, उसकी मजबूरी होती है। वह सामुहिक ऋण का दुरुपयोग करता है। विलासिता में उड़ाता है। अत: सामूहिक ऋण देश व समाज के पतन का कारण बनता है।

गत दिनों सामाजिक कार्यकर्ता अरविन्द केजरीवाल ने एक रहस्य उद्‌घाटन करते हुए विश्व बैंक की करतूत को सबके सामने रखा था। विश्व बैंक दिल्ली सरकार को पेयजल योजना के लिए ऋण दे रहा था। उसकी छुपी हुई शर्त थी कि इस कार्य का ठेका, इस कम्पनी विशेष को ही मिलना चाहिए। काम की बोली लगी सभी कम्पनियों ने निविदायें भरीं, समय पर खोली गईं। विशेषज्ञों ने कम्पनी का चयन किया विश्व बैंक की सिफारिश छठे क्रम पर थी। बैंक ने पता किया कौन विशेषज्ञ है, उसको समिति से हटवाया। दुबारा निविदा मांगी गई। इस बार भी कम्पनी तीसरे क्रम पर थी। विश्व बैंक ने निर्णय अस्वीकृत करा दिया। बात समाचार पत्रों में आई संचार साधनों में चर्चा हुई, बैंक को अपने हाथ पीछे खींचने पड़े। जो आपके निर्णयों को इस प्रकार से प्रभावित करते हो, उनसे आप अपनी सुरक्षा और समृद्धि की आशा कैसे कर सकते हैं।

हम समझते हैं, कम्पनियाँ व्यापार करने आई हैं सामग्री का उत्पादन बड़ी मात्रा में करके कम मूल्य में देकर हमारा हित करेंगी यह विचार भ्रामक और विनाश की ओर ले जाने वाला है। कम्पनी माल को सस्ता तभी करती है, जब सामने माल बेचने वाली बराबर की कम्पनी हो। दूसरी कम्पनी की उत्पादकता कम करना या उसको समाप्त करना इनका उद्देश्य होता है। जब मैदान में दूसरा विक्रेता नहीं रहता या अन्य स्थानों पर उत्पादन समाप्त हो जाता है, तो कोई कम्पनी, कोई दुकानदार, कोई विक्रेता सामान को कम मूल्य में कभी नहीं बेचता। इसके विपरीत सामान की मांग या आवश्यकता बढ़ते ही विक्रेता अपने सामान का मूल्य बढ़ाने लगता है। इसका उदाहरण है कारगिल का युद्ध। भारत अपनी सैन्य-सामग्री का सत्तर प्रतिशत आयात करता है। जब कारगिल का युद्ध प्रारम्भ हुआ तब तोप का एक गोला तीन हजार रुपये का था और युद्ध समाप्त होते-होते तोप के गोले का मूल्य चालीस हजार रुपये हो गया। भारत में आकर सस्ता सामान बेचने वाली कम्पनियाँ भारतीय उद्योगों की उत्पादकता समाप्त कर बाजार पर एक छत्र राज्य करने की इच्छा रखती हैं। हम इन्हें अपने लिए उनके द्वारा की गई उदारता समझते हैं।

सारे उद्योगपति, नेता, बड़े व्यापारी संचार-साधनों को बनाते और अपने वश में रखते हैं। जिससे वे अपने व्यापार को बढ़ा सकें तथा अपने अपराधों को छिपा सकें। आज संचार साधनों का सबसे बड़ा उपयोग आपकी मौलिकता नष्ट करने में किया जा रहा है। मनुष्य की मौलिकता उसके विचारों में होती है और विचार भाषा से बनते हैं। जिसके पास अपनी भाषा नहीं है, उसके पास मौलिकता भी नहीं हो सकती। संचार-साधन भारतीय भाषाओं को नष्ट करने में युद्धस्तर पर लगे हैं। आज संचार-साधनों में बलात्कार को बड़ा अपराध बताया जा रहा है, परन्तु इनके संचालक, इनके नौकर दिन-रात भारतीय भाषाओं से बलात्कार कर रहे हैं। बलात्कार से व्यक्ति का अस्तित्व और सम्मान नष्ट होता है। ये समाचार तन्त्र इस देश की भाषा को नष्टकर इसकी अस्मिता और सम्मान पर चोट पहुँचा रहे हैं। हमारे लिए आज दुराचार, बलात्कार जैसे शब्द कठिन हो गये हैं। संचार-माध्यमों की पढ़ाई से, रेप, गैंगरेप, एण्टी गैंगरेप जैसे शब्द राष्ट्र प्रेमियों के कानों पर हथौड़े बजा रहे हैं। यह सब उसी सुनियोजित तन्त्र का हिस्सा है।

आज तक जितने मुख्य धारा के संचार साधन हैं, लोग उनको ही प्रामाणिक मानते थे वे ही हमारे लिए वेद वाक्य थे, अन्तर्जाल (इन्टरनेट) ने इस तन्त्र की पोल खोल दी है। ये समाचार प्रसारक किस मालिक के हैं और इनके संवाददाता, सम्पादक, समाचार प्रसारक मात्र उनके नौकर हैं। ये सब केवल उस बात को कहते हैं, जो इनके मालिक चाहते हैं। इनके समाचार और प्रस्तुति भारत और भारतीयता को बुरा बताना, हिन्दु और देश को नीचा दिखाना, किसी भी अच्छी बात की पुरातनता के नाम पर निन्दा करना इस पूरे संचार तन्त्र का उद्देश्य और कार्य है। परन्तु सामाजिक संचार-साधनों के आने से इनकी पोल खुली है और ये बौखलाने लगे हैं। हमें इस देश की मौलिकता, इसकी भाषा, विचार, ज्ञान, संस्कृति, इतिहास, दर्शन, साहित्य, परम्परा जो मानव इतिहास की अमूल्य धरोहर है, उसकी रक्षा यहाँ के मूल मनुष्य की रक्षा के बिना सम्भव नहीं है। अतः सावधान होकर इसका प्रतिकार करने की आवश्यकता है। कहा भी है-

न विश्वसेत् पूर्वविरोधितस्य शत्रोश्च मित्रात्वमुपागतस्य।
दग्धां गुहा पश्य उलूकपूर्णां काकः प्रणीतेन हुताशनेन।।

-धर्मवीर

सूचना

परोपकारी पत्रिका अपने लेख, कविताओं, प्रतिक्रियाओं, पाठकों के विचार, विज्ञप्ति के लिए आप लेखक-महानुभावों से अनुग्रहित होती रही है। आप सभी लेखक-महानुभावों से निवेदन है कि अपने लेख, प्रतिक्रिया, विचार, सुझाव, सूचना इत्यादि कुछ भी सामग्री, जो प्रकाशनार्थ भेजी जा रही है उसे मुद्रित कराकर, उसका प्रूफ-संशोधन कर ही भेजने की कृपा करें। जो महानुभाव अपनी प्रतिक्रिया पोस्टकार्ड में भेजना चाहते हैं, वे स्पष्ट, सुपाठ्य लिपि में लिखकर अथवा लिखवाकर ही भेजें।

-सम्पादक

कामना का स्वरूप

-स्वामी विष्वङ्

मनुष्य के जीवन में कामना का महत्व अत्यधिक है। कामना-अभिलाषा-इच्छा ये पर्याय के रूप में लिए जाते हैं। प्रत्येक व्यक्ति की कामना अलग-अलग हो सकती है, परन्तु किसी भी व्यक्ति में कोई भी कामना न हो, ऐसा सम्भव नहीं हो सकता। हाँ, किसी में लौकिक कामना होती है, तो किसी में आध्यात्मिक-ईश्वर सम्बन्धी कामना हो सकती है। परन्तु बिना कामना के कोई भी व्यक्ति संसार में जीवन-यापन नहीं कर सकता है। कामना मनुष्य को पुरुषार्थी बनाती है, कामना से मनुष्य का आलस्य दूर होता है। कामना मनुष्य के प्रमाद को दूर करती है। मरते हुए व्यक्ति को भी कामना जीने की आशा जगा देती है। कामना से मनुष्य प्रसन्न, शान्त रहता हुआ भविष्य की उज्ज्वल आशा को लेकर सुनिश्चित होकर आशावादी जीवन व्यतीत करता है।

बुद्धिमान् व्यक्ति बुद्धि का सदुपयोग करता हुआ उचित अवसर पर उचित कामना को अपनाकर अपने कार्य की सिद्धि कर लेता है। वह बुद्धिमान् चाहे लौकिक जीवन व्यतीत कर रहा हो या आध्यात्मिक जीवन व्यतीत कर रहा हो। अनेक बार कुछ बुद्धिमान् ऐसी-ऐसी कामनाओं को मन में पाल रहे होते हैं कि जिनका लाभ न लौकिक जीवन में मिल पाता है और न ही आध्यात्मिक जीवन में मिल पाता है। मनुष्य को यह विचार कर चलना चाहिए कि कामना का सम्बन्ध सुख से, शान्ति से, तृप्ति से, प्रसन्नता से, निर्भयता से और स्वतन्त्रता से है। ऐसी कोई कामना नहीं करनी चाहिए, जिससे जीवन की शान्ति, सुख, तृप्ति, प्रसन्नता, निर्भयता और स्वतन्त्रता चली जाये। ऐसी कामना को मन में नहीं पालना चाहिए, जो मन को उद्विग्न, चंचल, चिन्तित और तनावग्रस्त करती हो। जन्म-जन्मान्तरों से चली आ रही कामनाएँ, न जाने कितनी बहुतायत में मन में पल रही हैं। उनको पूरा करते-करते मनुष्य का जीवन निस्सार होता जा रहा है। पूर्व में अर्जित कामनाओं को पूरा न कर पाने की स्थिति में जीवन चल रहा हो, ऐसी स्थिति में नित नयी कामनाओं को भी मन में स्थान दिया जा रहा है।

चाहे लौकिक उन्नति करनी हो चाहे आध्यात्मिक उन्नति करनी हो, दोनों उन्नतियों के लिए कामना को होना अनिवार्य है। परन्तु अनुचित कामना मनुष्य को प्रगति से, उन्नति से हटाकर गर्त की ओर ले जाती है। महर्षि मनु महाराज के अनुसार तो अनुचित कामनाओं को भोगते-भोगते मनुष्य की जीवनलीला ही समाप्त हो जाती है, पर अनुचित कामना का कभी अन्त नहीं हो पाता है। आज मनुष्य के मन में कामनाओं का बोझा इतनी अधिक है कि उनको पूरा करना असम्भव है। अनावश्यक कामनाओं के कारण मनुष्य अनधिकार चेष्टा करने लगता है। अधर्म, अन्याय करता हुआ इतने अधिक पाप इकट्ठे कर रहा है, जिसकी कल्पना करना असम्भव सा हो गया है। ऐसे उदाहरण बहुश: लौकिक व्यक्तियों में देखने में आते हैं। दूसरी ओर आध्यात्मिक व्यक्ति अपने-आपको आध्यात्मिक कहते हुए कामनाओं से मानो कोसों दूर रहते हैं। और कहते हुए भी दिखते हैं कि 'कामाना करना आध्यात्मिक व्यक्ति के लिए हानिकारक है, इसलिए कामनाओं का त्याग करना चाहिए'। ऐसा कहते व मानते हुए बैठ जाते हैं। उनमें न विद्या पढ़ने की कामना होती है, न सुनने की कामना होती है, न स्वाध्याय करने की कामना होती है, न ही परोपकार करने की कामना होती है। केवल बैठकर प्रभु-भक्ति करना चाहते हैं। ऐसा करते हुए, वे अपने को कामना रहित-निष्कामी मान लेते हैं।

जो आध्यात्मिक व्यक्ति केवल प्रभु भक्ति को ही सब कुछ मानते हैं। उनके जीवन में उत्साह-उमंग, स्फूर्ति नहीं रहती है। उतना पुरुषार्थ नहीं करते, जितना उन्हें करना चाहिए। जैसे सुख, शान्ति, तृप्ति, सन्तोष आदि मिलना चाहिए, वैसा उनको पुरुषार्थ-हीन जीवन में मिल नहीं पाता है। जिसके कारण आध्यात्मिक व्यक्ति के जीवन में दु:ख अशान्ति, अतृप्ति, असन्तोष बना रहता है। आध्यात्मिक प्रगति जितनी होनी चाहिए, उतनी नहीं हो पाती है। ऐसी स्थिति में वे व अन्य अध्यात्म-मार्ग पर ही संशय उत्पन्न कर बैठते हैं।

लौकिक मार्गी का अत्यधिक कामनाओं का पालना और आध्यात्मिक मार्गी का कामनाओं को ही त्यागना, ये दोनों ही घातक हैं। इसलिए कामना के यथार्थ स्वरूप को जानना और समझना चाहिए कि कौनसी कामना उचित है और कौनसी अनुचित है। उचित-अनुचित का विवेक तो करना ही होगा। विवेक होता है जानकारी-विद्या पढ़ने से, विद्या पढ़ी जाती है, विद्या पढ़ने की इच्छा उत्पन्न होने से। इसी पढ़ने की इच्छा को कामना कहते हैं। ऐसी कामना का होना अनिवार्य है। इसी प्रकार से बहुत सी कामनाएँ हैं, जो मनुष्य को अपने लक्ष्य की ओर बढ़ाती हैं।

इसलिए कामना के महत्त्व को पहचानना चाहिए। कामना करना तो आत्मा का स्वभाव है। आत्म-स्वभाव को मिटाया नहीं जा सकता। हाँ, कामना के स्वरूप को बदल सकते हैं। अर्थात् कामना को उचित कामना या अनुचित कामना के रूप में परिवर्तित कर सकते हैं। विद्या से, धर्म से, न्याय से उचित कामना और अविद्या से, अधर्म से, अन्याय से अनुचित कामना बन जाती है। विद्या पढ़ने की, धर्म पर चलने की और न्याय को अपनाने की कामना, तो करनी ही होगी। अत: कामना के बिना जीवन नहीं और कामना के बिना कृतकृत्यता भी नहीं है।

-ऋषि उद्यान, अजमेर।

महर्षि दयानन्द की वेदभाष्य शैली

-डॉ. धर्मवीर

महर्षि दयानन्द की वेदभाष्य शैली क्या है यह जानने की आवश्यकता स्वाभाविक है, क्योंकि स्वामी दयानन्द के कहने और लिखने का उद्देश्य औरों से भिन्न है। अन्य आचार्यों का उद्देश्य विद्वानों और बुद्धिमानों के लिए लिखना है। इसलिए उनकी लेखन शैली और भाषा विद्वानों के स्तर की होती है। इसके विपरीत स्वामी दयानन्द की दृष्टि में शास्त्र लोकमंगल के लिए रचे गये हैं। उनका उपयोग विद्वानों के लिए है, परन्तु वे जनसामान्य के जीवन के लिए भी उतने ही उपयोगी हैं। अत: शास्त्रों का ज्ञान ऐसा होना चाहिए जिससे मनुष्य का हित होता हो। इसके लिए उनकी भाषा भी सामान्य की समझ में आनी चाहिए। इस तथ्य को समझने के लिए स्वामी दयानन्द के जीवन की एक घटना सहायक हो सकती है। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने जब वेदभाष्य करना प्रारम्भ किया तो उनका उद्देश्य बड़ा व्यापक एवं स्पष्ट था, उनका लेखन केवल विद्वानों या आर्यसमाज के लोगों तक सीमित नहीं था वे चाहते थे, उनका किया वेदभाष्य सरकार प्रकाशित करे और वह विश्वविद्यालयों में पढ़ाया जाए। इसी भावना से उन्होंने पञ्जाब के गवर्नर को इसके लिए पत्र लिखा था। गवर्नर ने विचार के लिए एक समिति का निर्माण किया जिस में संस्कृत कॉलेज बनारस के प्रिन्सिपल तथा विश्वविद्यालयों के कुलपति थे। इस समिति ने स्वामी दयानन्द के वेदभाष्य को परम्परा के विपरीत कहकर अग्राह्य माना था। समिति की इस मान्यता के उत्तर में स्वामी दयानन्द ने 'भ्रान्ति निवारण' के माध्यम से आशंकाओं का निराकरण किया था और कहा था-'मेरा वेदभाष्य परम्पराओं के विपरीत अवश्य है, परन्तु उन्हीं परम्पराओं के विपरीत है जो स्वयं में सत्य के विपरीत है'। मध्यकाल के वेदभाष्यकारों को न तो उद्देश्य में परिवर्तन करना था न भाषा की उपयोगिता का प्रश्न था। अत: उनकी शैली से आचार्य दयानन्द की वेदभाष्य शैली का भिन्न होना स्वाभाविक था। स्वामी दयानन्द की वेदभाष्य शैली में अन्य भाष्यकारों से जो प्रमुख अन्तर दिखाई देता है, वह यह कि वे वेदमन्त्र के अर्थ करते हुए शब्दों के प्रचलित अर्थ को महत्त्व नहीं देते। स्वामी दयानन्द की दृष्टि में मन्त्र मनुष्य को क्या प्रेरणा दे रहा है यह मुख्य बात है। वे अपने अर्थ की प्रामाणिकता में निरुक्त शतपथ आदि ग्रन्थों को उद्धृत करते हैं। स्वामी दयानन्द की वेदभाष्य शैली में उनके द्वारा किया गया भावार्थ मन्त्र की दयानन्दीय दृष्टि कहा जा सकता है। वेद मन्त्रों के अर्थ करने का क्रम शास्त्रीय परम्परा के अनुसार ही है, जैसा कि उन्होंने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में प्रतिपादित किया है-

मन्त्रार्थभूमिका ह्यत्र मन्त्रस्तस्य पदानि च।
पदार्थान्वयभावार्था: क्रमाद् बोध्या विचक्षणै:॥

स्वामी दयानन्दकृत वेदभाष्य में प्रथम भूमिका के रूप में मन्त्र का विषय वर्णित है। इसके पश्चात् मन्त्र देकर उसका पदपाठ प्रदर्शित किया है। इसी क्रम से पदार्थ में प्रत्येक पद का अर्थ दर्शाया है। तदनन्तर सार रूप में मन्त्र का भावार्थ प्रस्तुत किया गया है। इन सभी व्याख्यान मन्त्रों का इसी शैली में भाष्य प्रस्तुत किया गया है।

स्वामी दयानन्द अपनी भाष्य शैली को ऋषि-मुनियों की व्याख्यान शैली मानते हैं। उनकी टीका तथा भाष्यों में वेदार्थ में जो दूषण किया है उनका सप्रमाण निराकरण करके सत्यार्थ का प्रकाशन किया गया ऐसा मानते हैं वे लिखते हैं-

आर्याणां मुन्यृषीणां या व्याख्या रीति: सनातनी।
तां समाश्रित्य मन्त्रार्था विधास्यन्ते तु नान्यथा॥
येनाधुनिकभाष्यैर्ये टीकाभिर्वेददूषका:।
दोषा: सर्वे विनश्येयुरन्यथार्थविवर्णना:॥
सत्यार्थश्च प्रकाश्येत वेदानां य: सनातन:।
ईश्वरस्य सहायेन प्रयत्नोऽयं सुसिध्यताम्॥ ऋ. भूमिका

वेदभाष्य शैली को समझने के लिये ऋषि दयानन्द के इससे सम्बन्धित विचारों को जानना आवश्यक है। इनको समझने के लिये डॉ. रामनाथ वेदालंकार की पुस्तक 'वेदभाष्यकारों की वेदार्थ प्रक्रिया' देखना लाभदायक होगा। उन्होंने स्वामी दयानन्द के वेदभाष्य पर विचार करते हुए लिखा है-अपने वेदभाष्य के विषय में महर्षि का यह कथन है कि ब्रह्मा से लेकर याज्ञवल्क्य, वात्स्यायन, जैमिनी पर्यन्त विद्वान् ऋषियों ने जो ऐतरेय शतपथ आदि भाष्य रचे थे, पाणिनि, पतञ्जलि, यास्क आदि महर्षियों ने जो वेद व्याख्यान और वेदाङ्ग निर्मित किये थे, जैमिनि आदियों ने जो वेदों के उपाङ्ग षट् शास्त्र बनाये थे और इसी प्रकार जो उपवेद तथा वेदों की शाखायें रची थीं, उनकी सहायता लेते हुए मैं अपने भाष्य में सत्य अर्थ का प्रकाश कर रहा हूँ। कोई बात अप्रमाणिक और कपोल कल्पित नहीं लिख रहा हूँ। भाष्य का फल क्या होगा, इसका उत्तर देते हुए लिखते हैं-''यानि रावणोवटसायणमहीधरादिभिर्वेदार्थविरुद्धानि भाष्याणि कृतानि, यानि चैतदनुसारेणेङ्गलेण्डशार्मण्यदेशोत्पन्नैर्यूरोपखण्डदेश-निवासिभि: स्वदेशभाषया स्वल्पानि व्याख्यानानि कृतानि, तथैवार्यावर्त्तदेशस्थै: कैश्चित् तदनुसारेण प्राकृतभाषया व्याख्यानानि कृतानि वा क्रियन्ते च, तानि सर्वाण्यनर्थगर्भाणि सन्तीति सज्जनानां हृदयेषु यथावत् प्रकाशो भविष्यति। टीकानामधिकदोषप्रसिद्ध्या त्यागश्च'' अर्थात् रावण, उवट, सायण, महीधर आदियों ने जो वेदार्थ विरुद्ध भाष्य किये हैं, और उन्हीं का अनुसरण करते हुए इंग्लैण्ड व जर्मनी देश में उत्पन्न यूरोप खण्ड निवासियों ने अपने-अपने देश की भाषा में जो स्वल्प व्याख्यान किये हैं तथा

उन्हीं के अनुसार आर्यावर्त देशस्थ किन्हीं लोगों ने प्राकृतिक (हिन्दी) भाषा में जो व्याख्यान किये हैं और जो किये जा रहे हैं वे सब अनर्थ से भरे हुए हैं, ऐसा सज्जनों के हृदयों में यथावत् प्रकाश हो जायेगा और उन टीकाओं में क्योंकि दोष अधिक है, अत: उनका त्याग किया जा सकेगा।

वेद विषय में स्वामी दयानन्द की प्रमुख धारणायें इस प्रकार हैं, जो उनके ग्रन्थों से ज्ञात होती हैं-

१. ऋग्वेद, यजुर्वेद (वा.भा.शुक्ल यजुर्वेद संहिता) सामवेद (कौथुम) अथर्ववेद (शौनकीय) ये चार ही मूलवेद संहितायें हैं। इतर ११२६ शाखायें इनकी व्याख्यान भूत हैं। ब्राह्मण ग्रन्थ, आरण्यक, उपनिषदें वेद नहीं हैं, अपितु वेदों का व्याख्यान करने वाले हैं। 'मन्त्र ब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्' यह कथन निराधार है। ईश्वरोक्त अतएव स्वत: प्रमाण केवल चार वेद ही हैं, शेष वैदिक साहित्य परत: प्रमाण है अर्थात् वेदानुकूल होने पर ही प्रमाण है।

२. वेद नित्य है, प्रलय हो जाने पर भी ईश्वर के ज्ञान में रहते हैं। सृष्टि के आदि में अग्नि, वायु, आदित्य और अङ्गिरस नामक ऋषियों के हृदयों में क्रमश: ऋग्, यजु, साम और अथर्व वेदों का परमेश्वर ने प्रकाश किया है। वेद उस ज्ञान का नाम है। ऋ.भा.भू. भाष्यकरण शङ्का समाधान विषय: के प्रारम्भ में वेद की पुस्तकों को वेद इस कारण कहते हैं, क्योंकि उनमें वह ज्ञान लिखा रहता है।

३. वेदों में मूलोद्देशत: सब विद्यायें हैं, यथा ब्रह्मविद्या, सृष्टि विद्या, भूगोल विद्या, खगोल विद्या, गणित विद्या, योग विद्या, मुक्ति विद्या, नौ विमानादि विद्या, तार विद्या, आयुर्वेद विद्या, पुनर्जन्मादि विद्या, राजप्रजा विद्या, वर्णाश्रम कर्त्तव्य विद्या, यज्ञ विद्या, शिल्प विद्या, धनुर्विद्या, वाणिज्य विद्या, कृषि विद्या आदि।

४. वेदों में अनेक देवों की पूजा का वर्णन नहीं है, प्रत्युत वेदों में अग्नि, इन्द्र, वरुण, मित्र आदि देवता एक ही परमेश्वर के विभिन्न गुणों को बताने वाले नाम हैं। साथ ही श्लेषालङ्कार आदि द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में अग्नि, सूर्य, विद्युत, आत्मा, प्राण, राजा, सेनापति आदि अर्थों को भी देते हैं।

५. वेदों के शब्द यौगिक या योगरुढ़ हैं, किसी एक ही अर्थ में रूढ़ नहीं हैं। इस कारण वे अनेक अर्थों को प्रकट करने में समर्थ हैं। यह आग्रह करना उचित नहीं है कि लोक में किसी शब्द का जो अर्थ है, केवल वही सर्वत्र वेद में भी अभिप्रेत है।

६. वेदों में किन्हीं ऋषियों, राजाओं, नगरियों, नदियों आदि का इतिहास नहीं है। ऐतिहासिक प्रतीत होने वाले नामों का यौगिक या योगरूढ़ अर्थ है।

७. वेदों में पशुबलि, नरबलि, मांस भक्षण आदि अमानवोचित कार्यों का समर्थन तथा अश्लील बातें नहीं हैं। जो वेदभाष्य वेद में इनका समर्थन करते हैं, वे भ्रान्त हैं।

८. वेदार्थ करते हुए पूर्वकृत विनियोगों का अनुसरण करना अनिवार्य नहीं है। उनसे स्वतन्त्र होकर भी वेदार्थ किया जा सकता है।

९. वेद पढ़ने का अधिकार मनुष्य मात्र को है। स्त्री, शूद्र आदि को उनसे वञ्चित रखना न्याय नहीं है।

१०. वेदों में पितृयज्ञ का अभिप्राय जीवित पितरों की पूजा है, मृतों की नहीं।

११. ऐसे कोई देवता-विशेष वेदों को अभिमत नहीं है, जो ऊपर कहीं स्वर्ग में रहते हैं तथा जिनके असुरों से युद्ध होते हैं। न ही वेदोक्त आर्य और दस्युओं या दासों के युद्ध से आर्य और द्रविड़ जातियों के मध्य होने वाले कोई ऐतिहासिक संग्राम अभिप्रेत हैं। देव या देवता शब्द समाज में विद्वानों का वाचक है। माता-पिता, अतिथि, आचार्य आदि सभी देव हैं और दिवु धातु के विभिन्न अर्थ जिनमें घटित होते हैं वे ईश्वर, आत्मा, प्राण, इन्द्रिय, सूर्य, चन्द्र आदि भी देव हैं।

१२. वेद के सविता, सूर्य, विष्णु आदि तथा उषा, अदिति, सरस्वती आदि पुल्लिङ्गी और स्त्रीलिङ्गी देवता जैसे किन्हीं प्राकृतिक पदार्थों के वाची हैं, वैसे ही विद्वान् पुरुषों और स्त्रियों के वाची भी हैं। अत: वेदों में प्राकृतिक पदार्थों के ज्ञान के साथ समाज-शास्त्र का भी उत्कृष्ट वर्णन है। अपना भाष्य करते हुए महर्षि ने इन सभी बातों को निरन्तर ध्यान में रखा है तथा वेदभाष्य में उन्होंने एक क्रान्ति कर दिखायी है। स्वामी दयानन्द वेदों में ज्ञानकाण्ड, कर्मकाण्ड, उपासनाकाण्ड और विज्ञान-काण्ड का वर्णन मानते हैं। अपने वेदभाष्य प्रसंग में वे इनको दो भागों में विभक्त करते हैं, उसको वे व्यावहारिक व पारमार्थिक संज्ञा देते हैं। ईश्वर उपासना को लेकर लिखी गई अपनी पुस्तक आर्याभिविनय ग्रन्थ में मुख्यता से वेदमन्त्रों का परमेश्वर सम्बन्धी एक ही अर्थ संक्षेप से किया है। दोनों अर्थ करने से ग्रन्थ बढ़ जाता। इससे व्यवहार-विद्या-सम्बन्धी अर्थ नहीं किया गया। परन्तु वेद के भाष्य में यथावत् विस्तार पूर्वक परमार्थ और व्यवहारार्थ ये दोनों अर्थ सप्रमाण किये जायेंगे। इस प्रकार स्वामी जी परमेश्वर सम्बन्धी अर्थ को परमार्थ कहते हैं। जिसमें परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना सम्मिलित है।

स्तुत्युपासनयो: सम्यक् प्रार्थनायाश्च वर्णित:।
विषयो वेदमन्त्रैश्च सर्वेषां सुखवर्द्धन:॥ श्लोक संख्या-६

ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका के प्रतिज्ञा-विषय में इस सम्बन्ध में स्वामी जी लिखते हैं-

अथात्र यस्य यस्य मन्त्रस्य पारमार्थिकव्यावहारिक-योर्द्वयोरर्थयो: श्लेषालङ्कारादिना सप्रमाण: सम्भवोऽस्ति, तस्य तस्य द्वौ द्वावर्थौ विधास्येते। परन्तु नैवेश्वरस्यैकस्मिन्नपि मन्त्रार्थेऽत्यन्तं त्यागो भवति। कुत:? निमित्तकारणस्येश्वरस्यास्मिन् कार्ये जगति सर्वाङ्गव्याप्तिमत्त्वात् कार्यस्येश्वरेण सहान्वयाच्च। यत्र खलु व्यावहारिकोऽर्थो भवति, तत्रापीश्वररचनानुकूलतयैव

सर्वेषां पृथिव्यादिद्रव्याणां सद्भावाच्च। एवमेव पारमार्थिकेऽर्थे कृते तस्मिन् कार्यार्थसम्बन्धात्सोऽप्यर्थ आगच्छतीति। इससे निम्न बातें स्पष्ट होती हैं-

१. वेदों में पारमार्थिक और व्यावहारिक दोनों प्रकार की विद्याओं का वर्णन है।

२. कुछ वेदमन्त्र ऐसे हैं, जिनमें श्लेषालङ्कार आदि से पारमार्थिक और व्यावहारिक दोनों प्रकार का अर्थ निकलता है।

३. कुछ वेदमन्त्रों का केवल व्यावहारिक अर्थ ही होता है तथापि ईश्वर अर्थ का सर्वथा त्याग उन मन्त्रों में भी नहीं है। शब्दार्थ ईश्वर परक न होने पर भी जिस पदार्थ का उस मन्त्र में वर्णन है, उसका निमित्त कारण ईश्वर ही है और वह ईश्वर जगत् के सब पदार्थों में व्यापक है तथा प्रत्येक कार्य पदार्थ के साथ कर्त्ता होने के कारण उसका सम्बन्ध है। मन्त्रवर्णित सब पृथिव्यादि देवों की सत्ता ईश्वर द्वारा की गई रचना की अनुकूलता के कारण ही है। अत: उन-उन पदार्थों के वर्णन द्वारा मन्त्र ईश्वर की भी सूचना देता है।

४. कुछ वेदमन्त्रों का केवल पारमार्थिक अर्थ ही होता है। तो भी जिस परमात्मा के विषय का मन्त्र वर्णन कर रहा है उसका जगत् के कार्य पदार्थों से सम्बन्ध होने के कारण उन कार्य पदार्थों की सूचना भी मन्त्र देता है।

इस प्रकार महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रदर्शित, प्रतिपादित तथा क्रियात्मक रूप में प्रस्तुत की गई वेदार्थ शैली ही सर्वोत्तम, प्राचीनतम तथा लोकोपकारक है। इस शैली से वेदों का उदात्त स्वरुप प्रकाशित होता है। यह शैली सर्वग्राह्य है, यह शैली वेदों को समझने और पढ़ने की इच्छा रखने वालों के लिये आदर्श एवं उपयोगी है।

सहायक ग्रन्थ-

१. वेद भाष्यकारों की वेदार्थ प्रक्रियायें-डॉ. रामनाथ वेदालङ्कार। २. वेद भाष्य पद्धति को स्वामी दयानन्द की देन-डॉ. सुधीर कुमार गुप्त ३. ऋषि दयानन्द की वेदभाष्य शैली-सम्पादक-डॉ. धर्मवीर।

-ऋषि उद्यान, अजमेर।

न्याय-दर्शन अध्ययन का अवसर

महर्षि गौतम प्रणीत **न्याय-दर्शन** और उस पर लिखा **वात्स्यायन-भाष्य** प्रमाण व अर्थतत्त्व को समझने की प्रक्रियाओं का सर्वाङ्गपूर्ण विवरण प्रस्तुत करता है। सभी वैदिक-अवैदिक दर्शनों को अपने मान्य सिद्धान्त प्रस्तुत करते समय इस पद्धति का प्रयोग करना अपेक्षित होता है। न्याय-दर्शन का मुख्य प्रतिपाद्य विषय 'प्रमाण' है। 'प्रमाण' को ठीक प्रकार जानने से ही तत्त्वनिश्चय ठीक हो पाता है, तभी मुक्ति का मार्ग भी प्रशस्त हो पाता है। प्रमाण ज्ञान से चिंतन-विचार की प्रक्रिया ठीक हो पाती है, नहीं तो अनजाने में मिथ्या सिद्धान्त गले पड़ जाते हैं। न्याय-दर्शन के अध्ययन से किसी भी बात की परीक्षा-समीक्षा की सामर्थ्य बढ़ती है और उचित-अनुचित का निर्णय सरलता-शीघ्रता-शुद्धता से हो पाता है। इस प्रकार यह शुद्ध ज्ञान की प्राप्ति में अत्यन्त सहायक होता है।

वानप्रस्थ साधक आश्रम, रोजड़, गुजरात में आचार्य सत्यजित् जी (ऋषि उद्यान, अजमेर) द्वारा कृष्ण जन्माष्टमी (भाद्रपद कृष्णपक्ष अष्टमी २०७०, २८ अगस्त २०१३) से इसका विधिवत् नियमित संपूर्ण अध्यापन कराया जायेगा। यह दर्शन १०-११ महीनों में जून-जुलाई २०१४ तक पूर्ण होगा। इस बीच प्रत्येक अध्याय की लिखित परीक्षा भी ली जायेगी। कुल ५ परीक्षाएँ होंगी। इनमें ७५ प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त करने वालों को **'न्यायाचार्य'**, ६१ से ७५ प्रतिशत तक अङ्क वालों को **'न्याय-विशारद'** व ५१ से ६० प्रतिशत तक अङ्क वालों को **'न्याय-प्राज्ञ'** की उपाधि दी जायेगी। इस कक्षा में संस्कृत से परिचित साधक प्रकृति के ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थी, संन्यासी पुरुष व महिलाएँ भाग ले सकते हैं। इसमें बुद्धिमान्, स्वस्थ, अपने कार्यों को स्वयं करने में समर्थ, सेवाभावी, अनुशासन में रह सकने वाले अधिकतम २० पूर्णकालिक व्यक्तियों का स्थान है।

इस काल में समय-समय पर स्वामी सत्यपति जी परिव्राजक का उपदेश-आशीर्वाद व सान्निध्य भी प्राप्त होता रहेगा। बीच-बीच में विभिन्न विद्वानों द्वारा अन्य विविध विषयों पर भी कक्षा एवं उपदेश होते रहेंगे। ब्रह्मचारियों संन्यासियों व अन्य असमर्थों हेतु निवास व भोजन व्यवस्था नि:शुल्क है। समर्थ प्रतिभागी इच्छानुसार सहयोग कर सकते हैं। माताओं-बहनों के लिए निवास की पृथक् व्यवस्था रहेगी। इच्छुक व्यक्ति कृपया अपने परिचय-योग्यता विवरण व चित्र को पत्र या ईमेल से भिजवा देवें। प्राप्त आवेदनों में से योग्य व पहले आये आवेदनों को वरीयता दी जायेगी। आवेदन पहुँचने की **अन्तिम तिथि-३१ मई २०१३** है। **चयन की सूचना ३१ मई के बाद दी जाएगी।** **सम्पर्क**-९४१४००६९६१ (आचार्य सत्यजित्) **रात्रि ८.०० से ८.३०। पता**-वानप्रस्थ साधक आश्रम, आर्यवन, रोजड़, पत्रालय-सागपुर, जिला-साबरकांठा, गुजरात-३८३३०७, ईमेल-vaanaprastharojad@gmail.com, styajita@yahoo.com ❋

कुछ तड़प-कुछ झड़प

-राजेन्द्र जिज्ञासु

हमारा प्रमाण भण्डार-मान्य डॉ. वेदपाल जी मेरठ ने मुनि हरिप्रसाद जी के विशाल साहित्य भण्डार को सुरुचि व गहराई से पढ़ा है। आप कभी-कभी मुनि जी की चर्चा छेड़कर सबका अच्छा ज्ञानवर्द्धन करते हैं। मैंने भी उन्हें एक से अधिक बार मुनि जी का एक महत्त्वपूर्ण प्रेरक प्रसंग सुनाया। मुनि जी लाहौर में ही रहा करते थे। आर्य विद्वान् उनसे मिलते रहते थे। एक बार पूज्य स्वामी वेदानन्द जी महाराज ने अपने दो शिष्यों को कुछ सीखने सुनने व सम्पर्क बढ़ाने के लिए मुनि जी के पास भेजा। उन दो युवा ब्रह्मचारियों में से एक थे पं. रामचन्द्र जी (स्वामी सर्वानन्द जी महाराज) दूसरे सम्भवत: पं. शिवदत्त थे। ये प्रथम बार ही मुनि जी के पास गये थे। मुनि जी ने इनकी वेशभूषा से ही समझ लिया कि ये गुरुदत्त भवन से आये हैं।

इन्होंने मुनि जी से कुछ चर्चा छेड़ी, तो उदासी सम्प्रदाय से जुड़े संस्कृत साहित्य तथा दर्शनों के महान् विद्वान् मुनि जी ने उन्हें कहा-स्वामी वेदानन्द जी से जाकर कहना कि ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों के चारों ओर अभेद्य दुर्ग खड़े कर दो। उन जैसा विद्वान् बच्चों को पढ़ाने में ही जीवन न खपा डाले। गुणी विद्वान् मुनि जी के अभिप्राय को समझते हैं। हमारे पुराने सभी यशस्वी विद्वान् वैदिक विचारधारा के प्रसार व धर्मरक्षा के लिए प्रमाण संग्रह में लगे रहते थे। उनके रजिस्टर देखकर बेगाने भी दंग रह जाते थे। प्रचार में रुचि रखने वाले आर्यसमाज के सेवक व कार्यकर्ता भी कहीं-कहीं अपना उदाहरण आप थे।

इस परम्परा को अखण्ड बनाये रखने की आवश्यकता है। प्राय: बहुत से आर्य जानते हैं कि महाशय राजपाल जी के बलिदान का कारण 'उन्नीसवीं सदी का महर्षि' तथा 'कृष्णा तेरी गीता जलानी पड़ेगी' ये दो गन्दी पुस्तकें थीं। श्रद्धेय लक्ष्मण जी ने पहली पुस्तक में मिर्जाई लेखक के ऋषि पर किये गये एक-एक प्रहार का तर्क व प्रमाण से पठनीय उत्तर दिया है। उस मिर्जाई ने अपनी पुस्तक के पृष्ठ ५-८ तक अत्यन्त घटिया ढंग से जोर-शोर से यह लिखा कि स्वामी दयानन्द को उनके निधन के पश्चात् मास्टर आत्माराम अमृतसरी आदि आर्य पुरुषों ने ऋषि की डिग्री दे डाली। वह ऋषि थे नहीं। यह बड़ाई उन पर थोपी गई। जब तक पं. लेखराम कृत ऋषि जीवन नहीं छपा था उन्हें किसी ने ऋषि न कहा, न लिखा, न जाना और न माना। मैंने सन् १९४८ में लक्ष्मण जी की उपरोक्त पुस्तक पढ़ी और मिर्जाई लेखक की गन्दी पुस्तक भी पढ़ी । मैं विद्यार्थी जीवन में ही अपने व्याख्यानों में इस प्रहार का नया-नया उत्तर देता रहता था। लेखों व पुस्तकों में इस विषय में नई-नई सामग्री देता रहता था। आर्यसमाज ने इस विषय को उठाकर ऋषि के व्यक्तित्व पर नये-पुराने प्रमाण संग्रहीत करने का उद्योग नहीं किया।

महर्षि के जीवन पर कार्य करते हुए इतिहास के स्रोतों की घनी छानबीन से पर्याप्त नई सामग्री मिली। राजस्थान के विश्वप्रसिद्ध इतिहासकार कविराज श्यामलदास जी द्वारा ऋषि जीवन की घटनाओं को लेकर लिखी गई उनकी कई कवितायें प्राप्त हुई हैं। इनमें सात बार ऋषिवर को यतिराट्, यतिवर, यति सती शब्दों का प्रयोग किया है।

कविराज की इन रचनाओं में '**ऋषिराज**' शब्द का भी प्रयोग किया गया है। कविराज जी ने जब इन कविताओं की रचना की तब तक तो पं. लेखराम जी के ग्रन्थ का लेखन कार्य भी आरम्भ नहीं हुआ था। कविराज जी के निधन के उपरान्त ही पं. लेखराम जी ने अपना लेखन कार्य आरम्भ किया था। इससे प्रमाणित हो गया कि धर्म द्वेषी, ऋषि द्वेषी और आर्यजाति के शत्रुओं ने घृणा द्वेष की नींव पर यह रेत की दीवार खड़ी की थी। आर्यवीरों ने रेत की ऐसी एक-एक दीवार को अपने तर्कों व प्रमाणों की तोपों से भूमि पर बिछा दी। यह नया प्रमाण हमारे लिये अद्भुत और अमूल्य है।

एक और प्रमाण-महाराणा सज्जनसिंह जी के जीवनी लेखक ने भी अपनी पुस्तक में महाराज के लिये '**महर्षि**' शब्द का प्रयोग किया है। मुझे अब कुछ याद आ रहा है कि मैंने इतिहास शास्त्र तथा इतिहासकारों पर एक अंग्रेजी पुस्तक में कविराज श्यामलदास जी पर एक सुन्दर लेख पढ़ा था। उसमें कविराज के कुछ पद्य उद्धृत किये गये थे। उनमें कविराज ने बहुत गौरव से स्वयं को **महर्षि दयानन्द जी का शिष्य बताया है।** मैं उन पद्यों की भी खोज कर लूँगा।

मेरा आर्यवीरों से अनुरोध है कि वे पुस्तकों की सूचियाँ ही बना-बनाकर अपनी विद्वत्ता की धौंस न जमाया करें। मेहता जैमिनि, आचार्य रामदेव जी तथा ला. रहतूलाल जी सेठ गंगोह सदृश उपयोगी साहित्य तथा प्रमाणों को चबा जाओ और पचा जाओ। धर्मरक्षा के लिए यह अत्यावश्यक है।

अनूठे दार्शनिक तर्क-मैं यदा-कदा युवकों को कहता रहता हूँ कि अपने महान् शास्त्रार्थ महारथियों के अनूठे तर्कों व चिन्तन की सुरक्षा करके उन्हें चिरस्थायी बनाओ। पं. रामचन्द्र जी देहलवी आदि की प्रत्युत्पन्न-मति को चुटकले बनाकर मनोरञ्जन का साधन न बनाओ। कहीं पुनर्जन्म सिद्धान्त की चर्चा छिड़ी तो मैंने ये तीन-चार तर्क सुनाये। सुनने वाले उस समय तो झूम उठे परन्तु, आगे बड़ों के नाम पर उनका प्रचार नहीं होता। यह बहुत बड़ा दोष है।

१. आने में जाना छिपा है-देहलवी जी बाजार सीताराम दिल्ली में पुनर्जन्म पर बोल रहे थे। यह ६७ वर्ष पुरानी घटना है। आपने तर्क दिया आने में जाने और जान में आना छिपा है। मैं घर से निकला तो मेरे पीछे कहा जा रहा है पण्डित जी समाज गये और आप कह रहे हैं पण्डित जी आये। यहाँ के आने में जाना छिपा है और जहाँ से गये उसमें आना छिपा है। इसी प्रकार हम संसार में आये हैं। कहीं तो थे। और यहाँ से जायेंगे, तो कहीं आना भी होगा ही।

२. डॉ. मुहम्मद इकबाल ने पं. लेखराम जी के तर्क को सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया है। सूर्यास्त हुआ, तारे निकले। क्या सूर्य फिर नहीं निकलेगा। रात व प्रभात का निरन्तर चक्र चलता है या नहीं? जीवन का भी इसी प्रकार से कोई अन्त नहीं है। यह तर्क पं. लेखराम जी की देन है। अच्छा है कि हमारे मुस्लिम भाइयों को यह भा गया है। यह उनकी लोकप्रिय पुस्तकों का अभिन्न अङ्ग बन चुका है।

३. श्रीयुत् लक्ष्मण जी और अशोक जी मुझे मिले तो मैंने कहा उपाध्याय जी ने कभी **'चल बसा'** शीर्षक से एक रोचक अनूठा लेख लिखा था। उसमें लिखा कि उर्दू में प्रयोग होने वाले दो शब्द मुझे अत्यन्त प्रिय हैं। किसी के मरने पर मुसलमान भी लिखते व कहते हैं **'चल बसा'**। इसका क्या अर्थ है? यही न कि यहाँ से चलकर कहीं अन्यत्र बस गया। खेद है कि हम ऐसे छोटे-छोटे मौलिक तर्कों व चिन्तन की सुरक्षा व प्रचार नहीं करते।

४. बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में अबोहर में आर्यसमाज का मुसलमानों से जीव तथा प्रकृति के अनादित्व पर शास्त्रार्थ हुआ। इस्लाम का पक्ष मौलाना सना उल्लाजी ने रखा। आर्यसमाज की ओर से तार्किक शिरोमणि स्वामी दर्शनानन्द जी ने जीव व प्रकृति के अनादित्व पर वैदिक दृष्टिकोण रखते हुए कहा कि इस्लाम प्रकृति व जीवों की उत्पत्ति तो मानता है, परन्तु इनका विनाश नहीं मानता। दोजख़ व जन्नत में सदा-सदा के लिए जीव भी रहेंगे और भोग भी। भला ऐसा एक तो उदाहरण दो कि जिसका आदि तो हो परन्तु अन्त न हो। हर बार स्वामी जी ने यह प्रश्न पूछा परन्तु मौलाना ने इस प्रश्न को छूआ तक नहीं।

शास्त्रार्थ में अन्तिम बारी मौलाना की थी फिर किसी ने बोलना नहीं था। अब मौलाना बोले कि गिनती एक से आरम्भ होती है, परन्तु इसको कहीं तक भी ले जाओ। इसका कहीं अन्त नहीं। तब मौलाना ने मुसलमानों से ताली तो पिटवा ली परन्तु यह बात इस भय से पहले नहीं कही, क्योंकि वह जानता था कि स्वामी जी झट से इसका खण्डन कर देंगे। गिनती का भी न आदि है और न अन्त है। एक से पहले १/२, १/३, १/४, १/५ जहाँ तक चाहो नीचे को ले जाओ। स्वामी दर्शनानन्द जी और पं. चमूपति जी के इस तर्क ने जीव तथा प्रकृति की उत्पत्ति मानने वालों को झकझोर कर रख दिया। स्वामी दर्शनानन्द निर्वाण शताब्दी वर्ष में मैं अगले अङ्कों में भी ऐसे मौलिक व मार्मिक तर्क देता रहूँगा।

वह कौन था? वह कौन थी?-आर्यसमाज के इतिहास में कुछ ऐसी घटनायें घटीं जिन्हें हम मील का पत्थर कहेंगे। कुछ बन्धु ऐसी महत्त्वपूर्ण घटनाओं के बारे में मुझसे प्रामाणिक जानकारी मांगते रहते हैं, परन्तु उनके यथार्थ स्वरूप का न तो प्रचार ही होता है और न ही उन्हें ढंग से सुरक्षित किया जाता है। इसी का यह दुष्परिणाम हो रहा है कि आर्यसामाजिक पत्रों में जिसके मन में जो आता है लिख देता है। ''पाँच हज़ार से सोने वालो जागो'' इस हाक को लगाने वाले आर्य चौकीदार का क्या नाम था? मैं ऐसा प्रश्न करने वालों को बताता रहता हूँ कि वह कोई साधारण आर्य पुरुष नहीं था। महात्मा नारायण स्वामी जी ने ऋषि की जन्म शताब्दी तथा बलिदान अर्धशताब्दी के अवसर पर आर्यों को अपने सन्देश में उसका आदर्श अपनाने की प्रेरणा दी थी। उसका नाम बहालसिंह आर्य था। उसमे पाँच आर्यसमाजें स्थापित कीं। पं. गंगाप्रसाद जी उपाध्याय की जीवनी में मैंने उस पर बहुत कुछ लिखा है। वह धामपुर निवासी था। पीएच.डी. के एक शोध प्रबन्ध में भी मैंने उसका उल्लेख करवाया है।

माता हंसा ठकुरानी-आर्यसमाज की स्थापना से बहुत पहले वेदप्रचार आन्दोलन आरम्भ करते हुए ऋषि ने राजपूतों को गायत्री मन्त्र जपना सिखाया। सन्ध्या हवन की लहर चलाई और ब्राह्मणेतर को यज्ञोपवीत देने का आन्दोलन भी राजपूतों से ही आरम्भ किया। देवियों को गायत्री अथवा वेद की दीक्षा कब, किससे, और कहाँ से आरम्भ की गई? नारी-नारी की रट लगाने वाली किसी देवी से इसका उत्तर मांगने की बजाय परोपकारी से ही यह उत्तर पूछा जा रहा है। कर्णवास छलोसर क्षेत्र के आर्य राजपूतों के नवरत्न ठाकुर गोपालसिंह जी की नब्बे वर्षीय विधवा ताई **माता हंसा ठकुरानी** को ऋषि जी ने गायत्री की दीक्षा देकर देवियों को वेदाधिकार का शंखनाद किया था। इस क्रान्ति का मूल्याङ्कन करो तथा कराओ।

यह इतिहास नहीं, कोई लेख नहीं-ये हदीसें हैं- दिल्ली से ब्रह्मार्पण नाम का एक मासिक छपता है। कागज छपाई तो बढ़िया होती है परन्तु सत्य तथ्य तथा प्रामाणिक कथन की पत्रिका के सम्पादन व संचालक मण्डल को कतई चिन्ता नहीं। मैं पत्रों को विहंगम दृष्टि से ही देखता हूँ। कम ही पढ़ पाता हूँ। इस पत्रिका के मार्च अंक में वयोवृद्ध संन्यासी स्वर्गीय वेदमुनि जी का पूज्यपाद महात्मा नारायण स्वामी जी पर एक लम्बा लेख छपा है। मैं यहाँ इसकी सामग्री, किसी घटना और किसी कथन का उल्लेख करके कोई समीक्षा नहीं करूँगा। सारा लेख हदीसों का पुलिंदा है। आर्यसमाज के एक सर्वमान्य नेता, विद्वान्, संन्यासी और साहित्यकार पर बड़ी हृदयहीनता से लिखा गया है।

प्रबुद्ध पाठक इस लेख की एक-एक बाद का स्वामी जी

की आत्मकथा अथवा हैदराबाद सत्याग्रह, सिंधु में सत्यार्थप्रकाश आन्दोलन विषयक साहित्य को उठाकर मिलान तो करें। क्या असत्य कथन से एक योगी, मुनि, महात्मा को आप महिमा मण्डित करेंगे? पं. इन्द्रजी लिखित इतिहास को उठाकर फिर इस लेख पर दृष्टि डालें। आर्यसमाज के स्तर को इतना नीचे तो न गिराते जावें कि स्वामी सर्वदानन्द जी के पूर्व नाम की तुक ऋषि दयानन्द के पूर्व नाम से जा मिलाई और इस लेख में आर्यसमाज के विद्वान् नेता पं. रामदत्त जी शुक्ल को सिंध में पहुँचाने का प्रबन्ध हो गया है। इस पर मैं क्या कहूँ?

हैदराबाद के निज़ाम का नया नाम **'आसफ़जाह निज़ामुल्मुल्क'** गढ़कर तो स्वामी वेदमुनि जी ने सब हदीसकारों के छक्के छुड़ा दिये हैं। विचार पुराणकार ऐसे-ऐसे कुशल लेखकों के सामने क्या टिक पायेंगे। मैं इससे अधिक क्या लिखूँ? आर्यसमाजी यह मत सोचें-समझें कि पत्र-पत्रिकाओं में छपे लेखों को यदा-कदा पढ़कर आप इतिहास के विद्वान् बन जायेंगे। इतिहास भी एक शास्त्र है। प्रत्येक व्यक्ति पं. विष्णुदत्त, स्वामी स्वतन्त्रानन्द तथा पं. इन्द्र की पंक्ति में खड़ा होने योग्य इतिहासकार नहीं हो सकता।

'प्रकाश' आर्यसमाजेतर जगत में कभी एक सिरमौर साप्ताहिक माना जाता था। इस पत्र की लण्डन की संसद में गूञ्ज सुनाई दी गई। हमारे पीएच.डी. का अंधानुकारण करते हुए नये-पुराने लेखकों ने यह दुष्प्रचार आरम्भ कर दिया है कि 'प्रकाश' साप्ताहिक का जन्म सन् १९०६ में हुआ। मित्रों! यह काला झूठ है। प्रामाणिक बात ही लिखा व कहा करो। पटियाला शाही व गोरा शाही को कम्पा देने वाले 'प्रकाश' का जन्म कब हुआ? आप यह भी नहीं जानते, तो इस विषय में मौन रहना ही अच्छा है। 'प्रकाश' के अंक अब भी कहीं तो होंगे ही, पता कर लें अन्यथा अमरीका के किसी पुस्तकालय में जाकर जाँच कर लें।

बड़ा सरल प्रश्न था-देशभर में कहीं भी चले जाओ अब हिन्दुओं में राम और कृष्ण आदि पुराने अवतारों का महत्त्व बहुत घट गया है। भीड़ साई बाबा, सत्य साई बाबा, सिद्धि विनायक आदि नये-नये भगवानों अथवा क्षेत्रीय भगवानों व देवी-देवताओं ने खींच ली है। एकेश्वरवाद की तो हिन्दुओं में सोच ही समाप्त हो गई। दु:ख-निवारक नये-नये बाबे अपना धन्धा चला रहे हैं। इसी का दुष्परिणाम है कि सुपठित हिन्दू भी धर्मच्युत हो रहा है। श्री धर्मवीर जी के साथ दक्षिण भारत की प्रचार यात्रा में कहीं यह सूचना मिली कि कुछ उच्च शिक्षित हिन्दू युवक धर्मच्युत हो चुके हैं अथवा होने वाले हैं। विश्व हिन्दू परिषद् ने उनका पता तो लगा लिया परन्तु उनको बचाना उनके बस की बात नहीं थी।

साधारण सी बात पर वे डगमगा गये। परमात्मा ने सृष्टि क्यों रची? जिसने वेद, उपनिषद्, दर्शन का कभी स्वाध्याय नहीं किया, वह इस प्रश्न का क्या उत्तर देगा। हारकर एक आर्य से उनका सम्पर्क करवाना पड़ा। उसने उनके प्रत्येक प्रश्न का उत्तर दिया। पं. रामचन्द्र जी देहलवी का इसी विषय का एक रोचक व मौलिक व्याख्यान मिलता है। धर्मवीर जी तथा मैं भी उनसे मिले। हमने उन्हें बताया परमात्मा ने सृष्टि क्यों बनाई, इसका उत्तर वे दें जो सृष्टि से पूर्व केवल एक ही सत्ता (ईश्वर) का होना मानते हैं। पूर्ण परमात्मा को बैठे-बैठे सृष्टि रचना की क्यों सूझी? वैदिक धर्म तो तीन अनादि पदार्थ मानता है। परमात्मा पूर्ण है। उसको कुछ नहीं चाहिये। प्रकृति जड़ है। उसमें कोई इच्छा नहीं। इस दृष्टि से वह भी पूर्ण है। जीव अल्पज्ञ है। उसे सुख की इच्छा है। वह दु:ख से बचना चाहता है। पूर्ण और करुणा सागर भगवान् ने जीवों के कल्याण के लिए जगत बनाया। प्रकृति इसका उपादान कारण है। प्रकृति के अस्तित्व की सार्थकता ही जीवों के उपयोग में आने से है। सत्यार्थप्रकाश तथा ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में इन सब प्रश्नों के उत्तर हैं। हमने उनकी सन्तुष्टि करवा दी। मायावादी तथा अवतारवादी के पास इन प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं। न तो 'कुन' (हो जा और हो गया) वाले और न ही पोल (Void) से आने वाले इस प्रश्न का उत्तर दे सकते हैं।

पापी और पाप क्यों पैदा किये?-यह शंका भी प्राय: पूछी जाती रही कि परमात्मा ने पापी व पाप क्यों पैदा किये? इसका उत्तर तो वे दें जो शैतान की उत्पत्ति का प्रयोजन ही पाप करवाना व बहकाना मानते हैं। श्री अनवर शेख ने तो इसी विषय पर **'शैतान और यज़दान'** आदि कई उत्तम पुस्तकें (गद्य व पद्य) दोनों में लिखी हैं। प्रश्न तो श्री अनवरशेख के हैं उनके भीतर पं. लेखराम व स्वामी दर्शनानन्द बोलते हैं। शैतान को भगवान् ने पैदा ही पाप करवाने व पाप फैलाने के लिए कर रखा है। वैदिक दार्शनिक पं. गंगाप्रसाद जी उपाध्याय की घोषणा है-"God has neither created the sinner nor the sin" परमात्मा ने न तो पापी को उत्पन्न किया है और न ही पाप को। जीव कर्म करने में स्वतन्त्र है। वह अपनी अल्पज्ञता, दीनता और दुर्बलता के कारण कर्त्तव्य मार्ग से भटक जाता है। ऐसा वेद मन्त्रों में कहा गया है। प्रत्यक्ष से भी यही पता चलता है।

इन्हें कुछ भी लिखने की छूट है-दो चार मित्रों ने यह सूचना दी है कि भोपाल की वेद घाती मण्डली के छोटे निर्देशक ने आपके बारे में यह लिखा है कि आप कभी उनके प्रशंसक रहे और नरेन्द्र भूषण केरलीय के भी। अब वह तिलमिला रहे हैं कि हमारा दृष्टिकोण क्यों बदल गया? उनको कुछ भी लिखने की छूट है। वह सब कुछ जानते हुए भी पूछते हैं तो उन्हें कुछ भी लिखने की छूट है।

आर्यसेवक की शताब्दी पर मैंने बताया था कि बैंगलूर में मैं दो-तीन बार इनके कमरे में बातचीत करने गया। यह भक्ति भाव से सन्ध्या कर रहे थे। फिर गया तो वेद का स्वाध्याय कर

रहे थे। मैंने इन्हें परमधर्म का पालन करते देखा तो इनके पुराण (योगी का आत्म चरित्र) की उपेक्षा करके भावुक होकर समझा कि यह अनादि ईश्वर के अनादि ज्ञान वेद के पक्के भक्त हैं। तभी श्री गुणग्राहक ने आर्यसेवक में प्रकाशित इनके वेद प्रहार की ओर मेरा ध्यान खींचा। अपने मनोभावों को छुपाकर यह भाई बगुला भक्त बनकर वैदिक सन्ध्या व वेद पाठ करके हमें भ्रमित करता रहा। कहिये! अब कारण समझ गये या नहीं।

नरेन्द्र भूषण के बार में कुछ संकेत दे चुका हूँ और सुनलें। उसने और उसके धर्मात्मा परिवार ने केरल में स्थापित किये गये गुरुकुल की सारी स्थिर निधि हमारी जानकारी के बिना मेरे व महात्मा प्रेमप्रकाश जी के हस्ताक्षर करके Forgery (धोखाधड़ी) से बैंक से निकलवा ली। हमने समाज के अपयश का ध्यान करके इस परिवार को जेल में नहीं पहुँचाया।

महोदय, ला. लाजपतराय, भाई परमानन्द ने द्रोह करने वाले अपने धर्मात्मा समझे जाने वाले मित्रों से किनारा किया या नहीं? महर्षि दयानन्द जी ने मुन्शी इन्द्रमणि जी, ला. जगन्नाथ आदि के बारे में अपना विचार बदला या नहीं? सरकारी गुप्तचर ला. मूलराज ने ऋषि के बार-बार पत्र लिखने पर गोकरुणानिधि का अनुवाद करने या न करने के बारे में अपने मन की बात प्रकट ही न होने दी। पं. लेखराम जी हत्यारे को पालते रहे। क्या छुरा खाकर उसे छलिया बताकर कोई भूल या अपराध किया। मनुष्य का सत्कार सत्कर्मों से होता है। हेरफेर का परिणाम आपके सामने है।

वेदप्रकाश श्रोत्रिय जी का मेरे बारे में लेख छपा है। यह पता चल गया। मैंने इसे पढ़ा ही नहीं। मुझे छपने से पहले भेजा अवश्य। मैंने कूड़ेदान में बिना पढ़े फैंक दिया। उन्हें कुछ भी लिखने व कहने की छूट है। श्रीमान् जी एक आदर्श पुत्र हैं। एक आदर्श पति हैं तथा आदर्श पिता हैं। इस महापुरुष ने स्वयं मुझे प्रयाग के एक समाज के वकील प्रधान की द्वार बन्द करके धुनाई करने की कहानी सुनाई। दक्षिणा मुँह मांगी लेकर उसे छोड़ा। सच-झूठ को तो यही जाने क्या था? मैंने इसके मुख से सुनी कहानी का सार यहाँ दे दिया। हरिभूमि तथा मधुर लोक में इनके मित्रों ने स्वामी दीक्षानन्द जी को विष दिये जाने का कोई समाचार छपवा दिया। उसमें इन्हें भी कैप्टिन देवरत्न जी के साथ लपेटा गया था। यह कहानी मुझे आपने स्वयं सुनाते हुए अग्निवेश महाराज को माँ-बहिन की सारी व्याकरण का प्रयोग करते हुए जो कुछ कहा-वे इन्हें सब याद होगा। आज उसी अग्निवेश की छत्र-छाया में परोपकार कर रहे हैं।

मैं इनको कुछ नहीं कहूँगा। मैं एक साधारण समाज सेवी हूँ। अध्यक्ष हूँ। जाने अनजाने में भूल तो मुझसे हो जाती है, परन्तु आर्यसमाज के लिए हड्डियाँ तुड़वाई हैं। दु:ख-कष्ट झेले हैं। तन, मन व धन से सेवा की है। प्रचार यात्राओं पर जाते हुए अपवाद रूप में भी कोई मार्ग व्यय नहीं मांगा। मिला तो ले लिया अन्यथा चुपचाप निकल आया। जिस कुल में जन्मा उसने भी समय-समय पर धर्म रक्षा के लिए अग्नि-परीक्षा दी। श्रोत्रिय जी तो आचार्य हैं। वह आचारवान्, विचारवान् हैं। उनका आचार तो ऊँचा है ही। विचार भी बहुत ऊँचे हैं। उनको नमन करने में ही सबका भला है।

श्री खुशवन्तसिंह का प्रहार और चमत्कार- हिन्दुस्तान टाईम्स अंग्रेजी दैनिक चण्डीगढ़ के १८ फरवरी २०१३ के अंक में वयोवृद्ध पत्रकार श्री खुशवन्तसिंह ने अपने स्तम्भ में Aum and ego शीर्षक से एक भ्रामक, निरर्थक और घातक टिप्पणी देकर हिन्दुओं विशेष रूप से वेदनिष्ठ आर्यों पर एक निन्दनीय प्रहार किया है। खुशवन्तसिंह ओ३म् की महिमा और अर्थ जानते हैं, परन्तु अपने मुख्य विषय सुरा, सुन्दरी व सैक्स से हटकर यह धर्मदर्शन पर भी निर्णय देते रहते हैं। कुरान पर, सिखमत पर कभी कोई ऐसी टिप्पणी करने का इन्हें साहस नहीं हुआ। सुरजीतसिंह बरनाला ने कभी कहा बताते हैं कि खुशवन्तसिंह के प्रत्येक लेख में सुरा, सुन्दरी व माँस की चर्चा मिलती है। इन्होंने सिखों की गुरबाणी का भी कुछ अंग्रेजी अनुवाद किया है। सिख इतिहास पर भी लिखा है।

इस टिप्पणी से पता चला कि यह वर्षों से ओ३म् का अर्थ, गौरव जानने के लिए उत्सुक परेशान तथा हैरान है। इनके शब्दों को पढ़कर लगा जल बिन प्यासी मीन के सदृश ओ३म् के अर्थ जानने के लिए हमारे यह वयोवृद्ध पत्रकार तड़प रहे हैं। इन्हें इसके लिए इतनी कसरत करनी पड़ी कि ऑक्सफोर्ड डिक्सनरी के आरपार जाना पड़ा। ठीक यही स्थिति एक बुढ़िया की एक बार हो गई। उसकी सूई घर में गुम हुई। रात का समय था। अन्धेरे में घर में सूई कैसे खोज पाती। गली में नगरपालिका के खम्बे पर बिजली के बल्ब का लाभ उठाकर वहाँ सूई खोजने लग गई। भारतीय धर्मग्रन्थों तथा संस्कृत के शब्द छोड़कर खुशवन्त जी ऑक्सफोर्ड डिक्सनरी की शरण में पहुँच गये। "I have come to the conclusion that it stands for self" निष्कर्ष यह निकाला कि ओ३म् का अर्थ अभिमान-अहंकार है। बलिहारी इस बुद्धि के। यह कैसा चमत्कार और घिनौना वार हिन्दूओं पर कर दिया। सिख विद्वान् बैठे हँस रहे या तमाशा देख रहे हैं। सम्भवत: वे सुरजीतसिंह के समान खुशवन्तसिंह की मानसिकता को समझकर इसे महत्त्व ही नहीं देते।

सिखों का भक्ति, भजन, प्रभात वन्दन 'एक ओंकार' से जपुजी के पाठ से आरम्भ होता है। खुशवन्त जी 'ओ३म्' ही तो वह मुख्य कड़ी है जो सिखों को भारतीय धर्म व संस्कृति से जोड़े हुए है। क्या गुरुजी यहाँ ओ३म् का अर्थ Pride or Egotism लेते हैं। क्या सिख अहंमन्यता की प्रभात वेला में उपासना करते हैं? गुरुओं का यहाँ भाव शत-प्रतिशत वही है जो गायत्री मन्त्र के साथ ओ३म् का है। महाराज गुरुवाणी पढ़िये और यहाँ ओंकार का अर्थ बतायें क्या है?

ओंकार ब्रह्मा उत्पत्ति। ओंकार किया जिन चिति॥
ओंकार सैल जुग भए। ओंकार वेद निरमए॥
ओंकार शब्द उधरे। ओंकार गुरमुखि तरे॥

वेद पर वार करते हुए आप फतवा देते हैं कि ''The Gurbani warns people against having too much of it'' अर्थात् गुरवाणी लोगों को सावधान करती है कि इसको ओ३म् को बहुत कुछ मत जानो। यह गुरुओं व गुरुवाणी से भी घोर घात है। ''**ओंकार गुरमुखि तरे**'' इससे बढ़कर ओ३म् की महिमा गुरु नानक क्या कहते व बताते।

सच है सरदार जी!

वेद बखिआन करत साधु जन भागहीन समझत नहीं खलु। '**ओं सति नाम कर्ता पुरुष**' का अर्थ सिखों को आप Pride और Egotism अहं ही बतायेंगे क्या?

गुरु गोविन्द सिंह जी ने लिखा है–

प्रणवो आदि एकंकारा। जल-थल महियल किया पसारा।

यहाँ '**प्रणव**' शब्द के अर्थ ऑक्सफोर्ड डिक्सनरी से खोजकर फिर ओ३म् के साथ उसको जोड़ेंगे क्या? इससे तो अनर्थ ही होगा। वैदिक साहित्य से थोड़ा परिचय प्राप्त कीजिये। Pride और Egotism का अहंमन्यता का महारोग आपका पीछा कर रहा है। उससे बचने के लिए अर्थ सहित प्रणव जप का बुढ़ापे में जप कीजिये।

महोदय गुरुद्वारों पर मुख्य द्वार पर '**एक ओंकार**' जो लिखा होता है क्या वह अहंमन्यता को बढ़ाने और महिमा मण्डित करने के लिए अंकित होता है? सिखों का कौनसा कर्मकाण्ड और पर्व होता है जहाँ एक '**एक ओंकार**' का जयकार नहीं होता? क्या यह सब अहंकार पूजा ही है? सिखों के ध्वज में क्या ओंकार नहीं होता?

आपने इतना कुछ होते हुए भी ओ३म् का अवमूल्यन करने का जो दुस्साहस किया है इसे देखकर फारसी की यह सूक्ति अनायास ही अधरों पर उतर आती है– **चिह दिलावरस्त दुज़दे कि बर कफ़ चिराग दारद।**

चोर कितना साहसी है कि तली पर दीपक धरकर चोरी करने निकला है। आपने गुरबाणी की आड़ में ओ३म् पर वैदिक धर्म और संस्कृति पर एक घृणित व निन्दनीय वार किया है। क्या बुढ़ापे में आपको हिन्दुओं की भावनाओं को आहत करने और सत्य का वध करने में आनन्द आता है? याद रखिये गुरबाणी का घोष है–

दीवा तले अन्धेरा जाइं। वेद पाठ मति पापां खाह।

फिर कहा–

असंख ग्रन्थ मुखि वेद पाठ।

चारे वेद होए सचिआर।

चारों वेद ओ३म् जय का आदेश देते हैं, उपदेश देते हैं। गुरबाणी में जो १ ओंकार आता है उसका आप क्या अर्थ लेते हैं? '**ओंकार वेद निरमए**' गुरबाणी का यह शब्द हम पहले दे चुके हैं। यहाँ आप '**ओंकार**' का अर्थ क्या वही लेंगे जो हिन्दुस्तान टाईम्ज़ में आपने दिया है। इससे तो यह सिद्ध होता है कि आप स्वयं को गुरुओं से भी बड़ा मानते हैं। यह तो फिर अहंमन्यता का महारोग आपको चिपक लिपट गया है। हम आपकी इस अवस्था में क्या कर सकते हैं? भगवान् से भी आपके लिए क्या प्रार्थना करें? आप तो कई बार स्वयं को नास्तिक लिख चुके हैं।

–वेद सदन, अबोहर।

'विचार'

–दाताराम आर्य 'आलोक'

यह विचार ही तो है कि गिरने नहीं देता,
यह विचार ही तो है कि चढ़ने नहीं देता।

विचार ने ही दार्शनिक योगी ऋषि बनाये,
विचार ही एक हर्फ पढ़ने नहीं देता।

विचार से प्रभु भक्ति में जीवन बिताया,
यही मन मन्दिर में प्रभु को उतरने नहीं देता,

विचार दाग से डराता है एक को पूरे जीवन,
एक विचार जरा भी कालिख उतरने नहीं देता।

एक विचार कहता है मापो सागर की गहराई,
एक विचार पानी में पग धरने नहीं देता।

विचार से दयानन्द बने सबसे निराले,
जहर पीकर भी जगन्नाथ को मरने नहीं देता।

आर्यत्व भी है वैदिक विचारों का 'आलोक'
जो बुराई को जीवन में उतरने नहीं देता।

–ग्रा. पो. बुटेरी, तह. बानसूर, जिला–अलवर
चलभाष–०९८११७४१९७६

समस्याओं का समाधान-वैदिक धर्म

-रत्नप्रकाश 'इन्द्रमोहन' आर्य

जंगे आजादी लड़ी तब अपने सपने और थे।
हाल अपना आज जो है वो कभी सोचा न था।।

हाल ही में दिल्ली में हुए सामूहिक बलात्कार काण्ड से नवयुवक-नवयुवतियों में सत्य के प्रति नवचेतना जागी है, जिसका मुख्य श्रेय आजकल के प्रसार माध्यमों को जाता है। उसी के कारण युवाशक्ति शीघ्रता से जागी है। वैसे इस बलात्कार काण्ड से कई सवाल उभर कर सामने आये हैं, जबकि ऐसा काण्ड पहली बार हुआ है, ऐसा भी नहीं है। इस तरह के काण्ड तो आये दिन समाचार पत्रों तथा दूरदर्शन के माध्यम से देखने को मिलते ही रहते हैं। प्रश्न यह उठता है कि आखिर इस जैसे काण्डों का जिम्मेदार कौन है? क्या मात्र शासन, पुलिस या जनता को जिम्मेदार माना जाये? जहाँ सारा शरीर ही विषाक्त हो और बुद्धि भी विकृत हो गयी हो, ऐसे में उपचार कहाँ से शुरु किया जाये, यह प्रश्न उठता है, और यह भी प्रश्न उठता है कि उपाय किस तरह ढूँढ़ा जाये और कहाँ से? ऐसे में रोग के मूल को खोजकर ही उपचार सम्भव हो सकता है। क्या इन सारे सवालों का हल मात्र कुछ दिन या दिनों में ढूँढ़ा जा सकता है? या कड़े कानून बनाने मात्र से ही इसका पूर्ण निराकरण हो जायेगा? या जिनके द्वारा यह अमल में लाया जायेगा क्या वे उतनी ही तत्परता तथा ईमानदारी से इसका निर्वहन करने में सक्षम हो पायेंगे। ऐसे अनगिनत प्रश्न हमारे सामने आते हैं, जिनका हल ढूँढ़ना आज की परिस्थिति में कठिन लगता है।

सारे उपाय कुछ समय के लिये समाधान कारक हो सकते हैं और उनकी आज आवश्यकता को भी नकारा नहीं जा सकता, मगर इसका पूर्ण हल तो मूल में सुधार से ही सम्भव होगा। इन सब बातों के समाधान हेतु हमें अपनी संस्कृति तथा अपने अतीत के इतिहास को जानना होगा। ना ये परिस्थितियाँ एक दिन में आयी हैं, ना ही इनका समाधान शीघ्रता में हो सकता है। अतीत के लिये हमें महाभारत काल के बाद का अवलोकन करना होगा। उसके पूर्व का हमारा इतिहास तो स्वर्णिम अक्षरों में लिखा पाया जायेगा। जहाँ से सारी दुनियाँ को संस्कृति की शिक्षा दी जाती थी और जहाँ राजा अश्वपति अपनी संस्कृति का उद्घोष गर्वपूर्वक करते थे।

'न मे स्तेनो जनपदे न कदर्यो न च मद्यपः।
नानाहिताग्निर्नोविद्वान् न स्वैरी स्वैरिणी कुतः।।

जिसका अर्थ-मेरे सारे राज्य में कोई चोर नहीं है, कोई कंजूस और अदानी (दान न देने वाला) नहीं है कोई शराबी नहीं है, यज्ञ न करने वाला कोई नहीं है, मूर्ख कोई नहीं है, कोई दुराचारी पुरुष नहीं है। जब कोई पुरुष ही चरित्रहीन नहीं है, तो स्त्री के तो दुराचारिणी होने का प्रश्न ही नहीं उठता। देखिये, नारी को वैदिक काल में कितना सम्मान प्राप्त है। जहाँ तक वेदों का या वैदिक संस्कृति का चलन इस देश में रहा, तभी तक सारी बातें ठीक रहीं। जहाँ से लोग वैदिक संस्कृति से विमुख हुए, वहीं से हमारा सभी क्षेत्रों से पतन होता गया।

इस देश ने वैदिक संस्कृति को खोकर ग्यारह सौ वर्ष गुलामगिरी को भुगता है, और आज आजादी के ६ दशकों बाद भी हमारी गुलामी की मानसिकता नहीं बदल पायी है। आज हम इन सारी बुराईयों के चलते नहीं कह सकते की हम आजाद हैं। जिस देश में हम रह रहे हैं, न हमारी अपनी एक भाषा है, ना हमारा एक धर्म है, ना ही हमारी एक संस्कृति है। ऐसे में हमारी युवापीढ़ी सत्य की खोज में किस ओर जाए? सारे रास्ते चौराहे पर जाकर गुम हो जाते हैं। ऐसे में विवेक और बुद्धि ही सत्यमार्ग की सहायक हो सकती है।

इतिहास से पता चलता है कि यहाँ दो तरह के शासकों ने लम्बे समय तक राज किया है। जिसमें मुसलमान शासकों ने अपनी तलवार के बल पर इस देश पर राज किया साथ ही अपने मत का प्रचार-प्रसार करना ही जिनका उद्देश्य रहा। इस्लाम की नींव इसी बात पर है कि भोग-विलास द्वारा तथा राजाश्रय द्वारा इस्लाम का प्रचार करना। साथ ही मानव समाज को ईमानवाले और गैर ईमानवालों को काफिरों में बाँटना और गैर ईमानवालों को सजा देना। इस्लाम को अपने इस उद्देश्य में सफलता भी मिली। वैदिक-संस्कृति के अभाव में पौराणिकता के कारण बहुत अधिक मात्रा में दलित वर्ग उपेक्षित रहा, जिसके कारण मुसलमानों को धर्मान्तरण में सहायता मिली। इसी कारण हमारे देश में बालविवाह, मैला ढ़ोना जैसी कुरीतियों को मजबूरीवश यहाँ के हिन्दुओं को अपनाना पड़ा। विस्तारमय से यहाँ सारी बातें लिखना इस लेख का उद्देश्य नहीं है, मात्र उपरी तौर पर संकेत करना ही उचित होगा। अधिक जानकारी हेतु हमारे विद्वत्जनों ने इस विषय में विस्तार से लिखा है, उन्हीं विद्वत्जनों के विचारों का मैं तो केवल संकलनकर्ता हूँ।

मुसलमान शासकों के बाद यहाँ अंग्रेज व्यापार के माध्यम से आये और अपने साथ अपनी कूटनीति तथा आधुनिकता को ले आये, जिसने हमारी संस्कृति, सभ्यता तथा भाषा को शिक्षा के माध्यम से बदल दिया, जो आजादी के ६ दशकों बाद भी बदल नहीं पायी। लॉर्ड मैकाले की ब्रिटिश संसद में की गयी घोषणा की सफलता ही इसका प्रमाण है। विवेकहीन हमारी युवा पीढ़ी का इस आधुनिकता की ओर आकर्षित होना सहज ही था, इसीलिये हमारी युवापीढ़ी देश में आधुनिकता तथा

सुधार का श्रेय अंग्रेजों को देती है, जबकि सारा ज्ञान, विज्ञान इसी देश से बाहर गया है। सारे ज्ञान का स्रोत 'वेद' और उसके जानने वाले ऋषि-मुनि इसी आर्यावर्त की देन है। हमारे ऋषि-मुनियों ने हिमालय की चोटी से सभी दुनियाँ वालों को शिक्षा का सन्देश दिया था। आज भी इन दोनों मतों का परिणाम हमारे आजाद देश में देखने को मिलता है। इस्लाम के कारण आज कश्मीर असुरक्षित है तथा ईसाइयत के कारण हमारे सीमावर्ती राज्य असुरक्षित तथा परेशान हैं, ऐसे में हमारा शासन मौनव्रत के अभ्यास में व्यस्त है।

इन सभी बातों से यही पता चलता है कि हम अपने आपको तथा अपने धर्म को भूल गये हैं। महाभारत के बाद से ही धर्म का अभाव होता गया और मत-मतान्तरों तथा सम्प्रदाय आते गये और धर्म छूटता गया और हम तरक्की के नाम पर अपने नैतिक पतन की ओर बढ़ते चले जा रहे हैं। आज जो कुछ भी गलत हो रहा है, यह उसी धर्म को मार देने का परिणाम ही है। इसीलिये हमारे शास्त्रों में कहा है-

धर्म एव हतो हन्ति, धमा रक्षति रक्षितः।
तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो, मा नो धर्मो हतोऽवधीत्।। (मनु. ८.१५)

जिसका अर्थ-धर्म जब मरता है तो सब मर जाते हैं, तथा धर्म की रक्षा में ही सबकी रक्षा है। जो धर्म को मारता है, मरा हुआ धर्म उसे मार देता है और जो धर्म की रक्षा करता है, धर्म उसकी रक्षा करता है।

आज मत-पन्थ तथा ढोंगी बाबा, गुरुओं के चक्कर में हम धर्म को भूल बैठे हैं। शक्तियाँ भी जाने कहाँ दिल्ली की ठण्ड में ठण्डी पड़ गयीं थी, जो सामूहिक बलात्कार काण्ड को नहीं रोक पायीं। धर्म प्राणीमात्र के लिये एक ही हो सकता है, जो ईश्वर प्रणीत वेदों द्वारा प्रतिपादित 'वैदिक धर्म' ही है। धर्म वही जो मनुष्यमात्र को धारण करने योग्य हो सकता है, जिससे मनुष्य का लोक-परलोक सुखद हो। महर्षि दयानन्द ने धर्म की बड़ी मौलिक परिभाषा की है-'जो पक्षपात्‌रहित न्यायाचरण, सत्यभाषण आदियुक्त ईश्वर आज्ञा वेदों से अविरुद्ध है, उसको 'धर्म' और जो पक्षपात सहित अन्याय आचरण, मिथ्याभाषण आदि ईश्वर आज्ञा भंग, वेद-विरुद्ध है उसको 'अधर्म' मानता हूँ। आज वेद द्वारा प्रतिपादित 'वैदिक धर्म' ही एकमात्र ऐसा धर्म है, जो विज्ञान की कसौटी पर स्वतः प्रमाणित है। अन्य सभी मत-मतान्तर तथा अट्ठारह पुराण सभी विज्ञान की कसौटी पर अप्रमाणित हैं। भले ही किसी भी पूर्ववर्ती ऋषि-मुनि के झूठे नाम से लिखे गये हों। मनुष्यकृत तथा अल्पज्ञ द्वारा लिखे होने से वेद तथा विज्ञान की कसौटी पर खरे नहीं उतरते।

दूरदर्शन के माध्यम से आज इन समस्याओं के चलते एक प्रश्न पोशाक सम्बन्धी भी उभरकर सामने आया है। आज हमारी नवयुवतियाँ तथा अभिनेत्रियाँ नग्नता तथा अश्लीलता को ही अपना 'टैलेन्ट' मान बैठी हैं, जिसका दुष्परिणाम उनकी मासूम, अबोध बहनों को भोगना पड़ रहा है, जो आये दिन उत्तेजना के शिकार दरिन्दों की बली चढ़ रही है। अपने किसी कार्य द्वारा औरों को हानि हो, यह तो मनुष्य धर्म के विपरीत आचरण ही कहलायेगा। अतः आज नवयुवतियों को इस बात से सीख लेनी चाहिये। नारी कभी भी अबला नहीं हो सकती, वह इस संसार की जननी तथा पूजा के योग्य है। उसे अपनी गरिमा बनाये रखने की आवश्यकता है। नग्नता, अश्लीलता को छोड़ अपनी आत्मरक्षा से स्वयम् 'सबला' होने की आवश्यकता है। भूखे भेड़ियों के सम्मुख आत्मसमर्पण करने की बजाय अपने आप को सत्आचरण, ब्रह्मचर्य पालन तथा आत्मरक्षा हेतु जूडो-कराटे आदि सीखना चाहिये और भूखे वासना के पुजारियों को सबक सिखाना चाहिये। साथ ही अन्यों को भी इस कार्य हेतु सहायता तथा प्रेरणा देनी चाहिये। शासन, प्रशासन किसी से अपेक्षा करना बेकार है। जिन देशों में ऐसे अपराधों के लिये कड़े दण्ड दिये जाते हैं, वहाँ अपराध नहीं होते। हमारे देश में भी कड़े कानून बनने चाहियें और उसका पालन भी कड़ाई से होना चाहिये। महर्षि दयानन्द ने ऐसे अपराधों के लिये कड़े से कड़े दण्ड की सिफारिश की है। और यह भी कहा है कि जहाँ ऐसे अपराधों के लिये साधारण व्यक्ति को एक गुना दण्ड हो, वहाँ पढ़े-लिखे सुशिक्षित व्यक्ति को सौ गुना दण्ड हो और उससे भी अधिक उच्च वर्ग के या राजनेताओं को सहस्र गुना दण्ड की व्यवस्था होनी चाहिये।

आज नवयुवकों को देश, धर्म तथा जाति के लिये सदैव जागरुक रहने की आवश्यकता है, यही इस सद्य स्थिति में उपयोगी लगता है। अतः हम ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि यह जागरुकता अपने आपको तथा अपनी संस्कृति को जानने में सहायक हो तथा इस देश से अन्धकार को मिटाकर, देश, धर्म-जाति की रक्षा में समर्थ बनावें।

-'श्रद्धा निवास' कटघरपुरा, मु.पो.त. किल्लेधारुर, जिला-बीड़, महाराष्ट्र, चलभाष-७४२१३३८७५१

मनुष्यों को योग्य है कि अधर्म के छोड़ने और धर्म के ग्रहण करने के लिये सत्य-प्रेम से प्रार्थना करें, क्योंकि प्रार्थना किया हुआ परमात्मा शीघ्र अधर्मों से छुड़ाकर धर्म ही में प्रवृत्त कर देता है, परन्तु सब मनुष्यों को यह करना अवश्य है कि जब तक जीवन है तब तक धर्माचरण ही में रहकर संसार वा मोक्षरूपी सुखों को सब प्रकार से सेवन करें।-**महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद भावार्थ-४.२८।**

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एक मात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ– प्रवचन, वेद–पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***– आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***– अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्ण रूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***– गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***– वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***– इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोध कर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***– योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों से भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युत पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्ष गांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाके फोड़कर जलाते हैं असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी–छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थिति होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता
(१६ से ३१ मार्च २०१३ तक)

१. ओमप्रकाश आर्य, मथुरा, २. आर्यसमाज झाडोडकला, नई दिल्ली-७२, ३. ब्रह्म आर्य सुमन्त, झाडोडकला, दिल्ली-७२, ४. सुयांश चौधरी, सहारनपुर, ५. रणजीत शर्मा, झारखण्ड, ६. बाबूराम, पीलीभीत, ७. सुरेन्द्रपाल आर्य, बरेली, ८. फूलचन्द, बरेली, ९. भगवान दारा आर्य, बरेली, १०. हरिदेव आर्य, बरेली, ११. नरदेव आर्य, बरेली, १२. रामगुलाम आर्य, बरेली १३. बन्धुराम आर्य, बरेली, १४. महेन्द्रपाल आर्य, बरेली, १५. रामगोपाल आर्य, दिल्ली-४२, १६. ओमप्रकाश, अजमेर, १७. विष्णु मुनि, ज्वालापुर, १८. रविन्द्र धारीवाल, दिल्ली, १९. ब्रिजेश आर्य, दिल्ली, २०. राजेश शर्मा, अजमेर, २१. सत्यदेव, दिल्ली, २२. शिवकुमार मदान, दिल्ली, २३. रामचन्द्र पांचोरी, गुजरात, २४. गुलशन साहनी, चण्डीगढ़, २५. नरेश कोहली, नई दिल्ली, २६. सुनील व अनिल, दिल्ली-६३, २७. सुमित सैनी, गुड़गाँव, २८. पवन कुमार, गुड़गाँव, २९. संचाम कुमार शर्मा, इलाहाबाद, ३०. उषा मोहता, चण्डीगढ़, ३१. आलोक माथुर, नोएड़ा, ३२. सरोज मदान, करनाल, हरियाणा, ३३. मुमुक्षु मनि, अजमेर, ३४. सुलोचना, अजमेर, ३५. जयलाल, हमीरपुर, उ.प्र., ३६. दीप्ति दिकारा, फरीदाबाद, ३७. शान्ति स्वरूप गोयल, लुधियाना, ३८. राजाराम नागर, रुद्रपुर, उत्तराखण्ड।

गौभक्तों से निवेदन

ऋषि उद्यान में संचालित गौशाला जो परमार्थ हेतु संचालित है। गौशाला में उत्पादित गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगत अतिथियों को नि:शुल्क वितरित किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौओं को उत्तम चारा मिले इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें, उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चेक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएंगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता
(१६ से ३१ मार्च २०१३ तक)

१. सत्यप्रिय यति महादेव, हि.प्र., २. आर.एस.कोठारी, जयपुर, ३. रामेश्वरी, अजमेर, ४. डॉ. हरिदत्त द्विवेदी, फर्रुखाबाद, ५. कोठारी परिवार, जयपुर, ६. प्रेमलता शर्मा, अजमेर, ७. अनन्या महेश्वरी, अजमेर, ८. प्रधान/मन्त्री आर्यसमाज वैदिक यज्ञ समिति, झाडोडकला, नई दिल्ली-७२, ९. सुशील कुमार गोयल, अजमेर, १०. केशवदास, उदयपुर, ११. जय गो माता, जालौर, १२. राजपुताना म्युजिक हाउस, अजमेर, १३. द्वारका प्रसाद रावत, सोनीपत, हरियाणा, १४. महाशय हीरालाल व रोहताश मुनि, महेन्द्रगढ़, १५. अमिता पांचाल, इन्दौर, १६. राजेश त्यागी, अजमेर, १७. नवीन, मथुरा, १८. सूरज देवी, अजमेर, १९. कमला देवी, अजमेर, २०. महिपाल, तबीजी, अजमेर, २१. उषा मोहता, चण्डीगढ़, २२. आलोक माथुर, गुड़गांव, २३. मुमुक्षु मुनि, अजमेर, २४. अनिल, गुड़गांव, २५. जितेन्द्र सिंह, जयपुर, २६. गिरधर गोपाल, अजमेर, २७. लक्ष्मी अहुजा, गुड़गांव, २८. सुरेन्द्र क्षेत्रपाल, अजमेर, २९. सुनिथ, चित्तौड़, ३०. आर्यसमाज मन्दिर, सरोजनी नगर, नई दिल्ली, ३१. शान्ति स्वरूप गोयल, लुधियाना, ३२. ओम प्रकाश इनाणी, किशनगढ़, अजमेर।

-परोपकारिणी सभा, अजमेर।

धनराशि भेजने हेतु सूचना

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उस पर '**मन्त्री परोपकारिणी सभा**' अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर

१. बैंक खाता संख्या - 091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावरहाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

IFSC - IBKL0000091

२. बैंक खाता संख्या - 10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।

IFSC - SBIN0007959

ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः

-पुरुषोत्तम आर्य

'ऋतेज्ञानान्न मुक्ति' सूत्र का अर्थ है कि सत्य ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं हो सकती।

परमात्मा सत्य ह-जीवात्मा सत्य है-प्रकृति भी सत्य है। प्रश्न यह है कि उक्त तीनों में से हमें किसका ज्ञान प्राप्त करना चाहिये? क्या ईश्वर या ब्रह्म का? यदि हाँ, तो हमारे शरीर में ज्ञान प्राप्त करने के साधन हैं-मन, बुद्धि और इन्द्रियाँ-क्या हम इनके द्वारा परमात्मा का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं?

उपनिषद् तो कहता है-''न तत्र चक्षुर्गच्छति न वागगच्छति न मनो न विद्मो.......।''

बृहदारण्यक की श्रुति भी कहती है-'ये नेदं सर्वं विजानाति तं केन विजानीयात्'' जिससे यह सबकुछ जाना जाता है उसको किससे जानें? तथा-**विज्ञातारमरे केन विजानीयात्** अर्थात्-सबके जानने वाले को हम किससे जानें? केन उपनिषद् भी कहता है-'जो नेत्रों से नहीं देखा जा सकता किन्तु जिसकी दी हुई शक्ति से नेत्र देखते हैं-वही ब्रह्म है।' जो वाणी से बोल कर नहीं जाना जा सकता-किन्तु जिसकी दी हुई शक्ति से वाणी बोलती है-वही ब्रह्म है। मनीषी कवियों ने भी अपना अनुभव इन पंक्तियों में व्यक्त किया है-

''**जाहि अनादि-अनंत-अखंड-अछेद-अभेद सु वेद बतावें।**
नारद से शुक-व्यास रटें-पचिहारें तऊ पुनि पार न पावें।।

इसी बात की पुष्टि गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी की है:-

''**गो गोचर जहँ लगि मन जाई। सो सब माया जानहु भाई।।**
अर्थात् जहाँ तक मन और इन्द्रियों की पहुँच है-वहाँ तक केवल प्रकृति है-ब्रह्म तक मन और इन्द्रियों की पहुँच नहीं है।

ईश्वर का तो ध्यान और साक्षात्कार किया जाता है जो समाधि की योग्यता तब तक प्राप्त नहीं हो सकती जब तक जिस बन्धन से हम छूटना चाहते हैं उसके वास्तविक स्वरूप को समझ नहीं लेते।

महर्षि स्वामी दयानन्द से पूछा कि-मुक्ति किसे कहते हैं? स्वामी जी ने कहा-''जिससे छूटना चाहते हो उसका नाम मुक्ति है।

प्रश्न-किससे छूट जाना?

उत्तर-जिससे छूटने की इच्छा सब जीव करते हैं।

प्रश्न-किससे छूटने की इच्छा करते हैं?

उत्तर-जिससे छूटना चाहते हैं।

प्रश्न-किससे छूटना चाहते हैं?

उत्तर-दु:ख से (अर्थात् प्रकृति के बन्धन से) महर्षि पतंजलि से भी यह प्रश्न पूछा गया था कि-दु:ख का कारण क्या है? यह क्यों उत्पन्न होता है?

महर्षि का उत्तर था-''द्रष्टृदृश्ययो: संयोगो हेयहेतु:''। अर्थात्-चेतन आत्मा से अचेतन प्रकृति का संयोग ही दु:खों का कारण है।

प्रश्न-प्रकृति के लिये तो योगदर्शन में कहा गया है कि-''भोगापवर्गार्थं दृश्यम्''-अर्थात् यह कार्यरूप प्रकृति तो हमारे भोग और मोक्ष प्राप्त कराने का साधन है-फिर इसे दु:खों का कारण क्यों कहते हैं?

उत्तर-प्रकृति स्वयं कुछ नहीं करती पदार्थों का दुरुपयोग ही हमारे दु:ख व कष्टों का कारण बनता है। विषय भोगों की लालसा में हम प्रकृति के आकर्षण में बुरी तरह उलझ जाते हैं। परमात्मा ने हमारे लिये प्रकृति के स्वरूप का यथार्थ ज्ञान प्राप्त करने के लिये ज्ञानेन्द्रियाँ प्रदान की हैं किन्तु हमने उन्हें भोगेन्द्रियाँ बना डाला यही तो दु:खों व कष्टों का कारण है।

प्रश्न-मनुष्य प्रकृति के पदार्थों का दुरुपयोग कैसे करता है? और उसका परिणाम क्या होता है?

उत्तर-यद्यपि प्रकृति मनुष्य के भोग और अपवर्ग का साधन है-परन्तु यदि इसके गुणों का दुरुपयोग करता है तो उसके जीवन को यह नारकीय बना देती है।

तमस् की प्रबलता में चित्त एवं चेतना में जड़ता व मूर्छा की स्थिति बनी रहती है। रजस् की प्रबलता में वासनाएँ, कामनाएँ तथा लालसाएँ पूरे अस्तित्व में हावी रहतीं हैं। सड़े-गले, दुर्गन्धित, मादक, माँस आदि पदार्थों के उपयोग से जीवन में तमस् व रजस् गुणों की प्रधानता हो जाती है-परिणाम स्वरूप तीन प्रकार के विकार उत्पन्न हो जाते हैं-जिनको मल-विक्षेप और आवरण कहते हैं। ये तीनों विकार व्यक्ति के मन में बहिर्मुखी वृत्ति को जागृत करते हैं और उसे सांसारिक प्रपंचों की ओर बलपूर्वक धकेलते हैं।

प्रश्न-प्रकृति के तमस् व रजस गुणों की प्रबलता का मानव जीवन पर और क्या प्रभाव होता है?

उत्तर-अभक्ष्य पदार्थों के सेवन से रजस् व तमस् गुणों में वृद्धि होने के कारण चित्त में मूढ़ और क्षिप्त अवस्थायें उत्पन्न होती हैं, इन्हीं के कारण विपर्यय और विकल्प वृत्तियों रूप मिथ्याज्ञान से युक्त मनुष्य का जीवन दु:ख व कष्टों के समुद्र में डूबता उतरता रहता है।

प्रश्न-मनुष्य प्रकृति के जाल में क्यों फँस जाता है?

उत्तर-मिथ्या ज्ञान ही इसका कारण है। चमक-दमक वाली यह प्रकृति मनुष्य के आकर्षण का केन्द्र बनी हुई है। सुख-सुविधा उत्पन्न करने वाले तथा जीवन को विलासिता और ध्वंस की ओर ले जाने वाले विज्ञान के आविष्कारों के जाल में फँसकर मनुष्य अपने जीवन के उद्देश्य को भूल गया है। भौतिक उन्नति के परिणाम स्वरूप आज विश्व में जो भ्रष्टाचार, बलात्कार, दुराचार, अनाचार, अत्याचार की आँधी चल रही है

उसने मनुष्य के मानवीय गुणों का ह्रास करके मानवता को विलुप्त कर दिया है।

प्रश्न-प्रकृति मनुष्य के आकर्षण का केन्द्र क्यों बनी हुई है?

उत्तर-प्रकृति के द्वारा परमात्मा ने संसार की रचना जिस उद्देश्य से की है उसको मनुष्य की साधारण बुद्धि समझ नहीं पाती। मनुष्य प्रकृति का यथार्थ स्वरूप न जानने के कारण आकृष्ट होकर उसके बन्धन में बन्ध जाता है। इसे एक उदाहरण से समझा जा सकता है-

कुछ जादूगर जादू के ऐसे-ऐसे आश्चर्यजनक खेल दिखलाते हैं-जिन्हें देखकर बड़े-बड़े बुद्धिमानों की बुद्धि भी चक्कर में पड़ जाती है। जैसे-खाली हाथ दिखाकर रुपयों का ढेर लगा देना-एक लड़की को तख्त पर लिटा कर तथा उसे आरे से काटकर उसके शरीर के दो टुकड़े अलग करके दिखाना। और भी कई विलक्षण खेल जादूगर दर्शकों को दिखाता है।

अब आप स्वयं सोचें और बतायें कि जितना आकर्षण व आश्चर्य दर्शकों को जादूगर के खेलों में होता है-क्या उतना ही आकर्षण व आश्चर्य उन खेलों में उस जादूगर को होता है? उत्तर होगा बिलकुल नहीं-क्योंकि जादूगर उन खेलों की वास्तविकता को जानता है। इसी प्रकार जब तक हम प्रकृति के लुभावने स्वरूप की वास्तविकता को नहीं जान लेते तब तक वह हमारे आकर्षण का विषय बनी रहती है। इसी को मिथ्या ज्ञान भी कहते हैं।

प्रश्न-ये मिथ्या ज्ञान क्या होता है? हमको यह जन्म-मरण के बन्धन में कैसे बान्ध देता है?

उत्तर-वस्तुओं को सुख का पर्याय समझना अर्थात् साधन को साध्य समझना मिथ्या ज्ञान है। इसी को अविद्या भी कहते हैं। मिथ्या ज्ञान से काम-क्रोध-लोभ-मोह आदि दोष उत्पन्न होते हैं। इनसे राग-द्वेष उत्पन्न होकर सांसारिक वस्तुओं को भोगने की कामना उत्पन्न होती है। कामना की पूर्ति के लिये प्रयत्न अर्थात् प्रवृत्ति होती है। प्रवृत्ति से भोगों की प्राप्ति और उन भोगों को भोगने से संस्कार-स्मृति और वासना उत्पन्न होते हैं। फिर उन संस्कारों से ही जन्म-मरण का चक्र आरम्भ होता है-क्योंकि जन्म अर्थात् शरीर के बिना कामनाओं की पूर्ति नहीं हो सकती। शरीर को दु:खों का घर कहा जाता है ''शरीरं व्याधिमंदिरम्''। इस प्रकार यह मिथ्या ज्ञान हमें दु:खों और जन्म-मरण के बन्धन में बान्ध देता है। प्रकृति का ही यह बन्धन है।

प्रश्न-प्रकृति के दु:खदायी बन्धन से छूटने के लिये हमें क्या करना होगा?

उत्तर-सूत्र में 'ऋत' शब्द का प्रयोग किया गया है। 'ऋत' का अर्थ है प्रकृति और उसके नियम। हमें प्रकृति के यथार्थ स्वरूप और उसके सही उपयोग को समझना होगा। प्रकृति के भोगों को भोगने की वासना ही शरीर और आत्मा के बन्धन अथवा सम्पर्क का कारण है।

प्रश्न-वासना क्या है? इससे कैसे छूटा जा सकता है? यह शरीर और आत्मा के सम्पर्क का कारण क्यों है?

उत्तर-संसार के पदार्थों को बार-बार भोगने की इच्छा ही वासना है। जब तक मन में वासना (भोगेच्छा) मौजूद है-तब तक शरीर से छुटकारा नहीं मिल सकता।

जब तक शरीर और आत्मा का सम्पर्क रहेगा, तब तक दु:खों एवं जन्म-मरण के चक्र से पीछा नहीं छूट सकता।

शरीर और आत्मा का सम्पर्क तब तक बना रहेगा, जब तक मन में भोगों को भोगने की वासना मौजूद है, क्योंकि शरीर और इन्द्रियों के बिना भोगों को नहीं भोगा जा सकता।

प्रकृति के वास्तविक स्वरुप को समझ लेने के बाद ही प्रकृति से अनासक्ति होगी। तभी कामना या वासना से पीछा छूट पायेगा।

तप, स्वाध्याय, योग, सत्संग एवं स्वानुभव द्वारा जब बुद्धि में विवेक जागृत होगा तब प्रकृति के यथार्थ स्वरूप को समझने की क्षमता उत्पन्न होगी।

प्रश्न-प्रकृति में जो हमारी आसक्ति बनी हुई है वह विरक्ति में बदल जाये, इसके लिये हमें क्या करना होगा?

उत्तर-इसके लिये पहले योग के पूर्वाङ्गों, यम-नियम, आसन, प्राणायाम तथा प्रत्याहार द्वारा अपनी इन्द्रियों व अन्त:करण की वृत्तियों को पवित्र और सात्विक बनाना आवश्यक है। तभी अन्त:करण में वह विवेक जागृत होगा। जिसके द्वारा व्यक्ति प्रकृति के यथार्थ स्वरूप को जान सकेगा। इसके साथ ही जब व्यक्ति विवेकपूर्वक चिन्तन और मनन करेगा तो निश्चित ही उसके मन में यह विचार आयेगा कि कामनाओं की पूर्ति करते-करते लोगों का जीवन बीत जाता है, परन्तु कामनाओं की तृप्ति कभी नहीं हो पाती। आचार्य मनु ने ठीक ही कहा है कि- ''नजातुकाम: कामानामुपभोगेन शाम्यति'' कभी-कभी मन में ऐसे विचार भी उठते हैं कि **भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ता तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णा** अर्थात् हमने भोगों को नहीं भोगा, भोगों ने हमको ही भोग डाला, और तृष्णा कभी बूढ़ी नहीं होती, हम ही बूढ़े हो जाते हैं।

स्वाध्याय, सत्संग के द्वारा वैराग्य की वृत्ति उदय होने पर व्यक्ति सोचने लगता है कि-दरिद्रता धन का अपहरण कर लेती है। बुढ़ापा यौवन को छीन लेता है और मृत्यु जीवन को चुराकर ले जाती है। जब इस प्रकार के विचार मन में उठने लगते हैं तब हमें प्रकृति के पदार्थों में कुछ भी आकर्षण नहीं दिखाई देता और प्रकृति के प्रति अनासक्ति और विरक्ति से हमारा अन्त:करण भर जाता है। उसी क्षण से हमारी वृत्तियाँ अन्तर्मुखी होकर-परमानन्द की ओर आकृष्ट होने लगती हैं।

-३२२, उद्गीथ भवन, रॉयलसिटी, ग्रीन हाउस,
विदिशा-४६४००१, म.प्र.
चलभाष-९८९३०७८४२५

॥ ओ३म्॥

योग-साधना शिविर

(दि. १६ से २३ जून २०१३। १६ जून को शाम ४ बजे तक पहुँचना है।)

आपके मन के किसी कोने में साधना करने की इच्छा बीज रूप में अंकुरित हो रही हो, अपने सर्वश्रेष्ठ जीवन को वेद एवं ऋषियों के आदर्शानुकूल ढालना चाहते हों, विधेयात्मक एवं सृजनात्मक जीवन चाहते हों, अपने मन को पवित्र बनाने की इच्छा रखते हों, वैदिक साधना-पद्धति को जानना समझना चाहते हों, वैदिक सिद्धांतों को समझना चाहते हों या अपने को वैदिक-धर्म के प्रचार-प्रसार में समर्पित करने की अभिलाषा रखते हों तो यह शिविर आपको आपके चिंतन के अनुरूप उचित दिशानिर्देश एवं उत्तम अवसर प्रदान करेगा।

शिविरार्थियों को पूर्ण लाभ मिल सके एतदर्थ अनुशासन में चलना नितांत आवश्यक होगा। शिविर के दिनों में अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह का पालन एवं मौन के निर्धारित समय में मौन रहना अनिवार्य होगा। शिविर के पूरे काल में साधक को पत्र दूरभाष आदि किसी भी प्रकार से बाह्य संपर्क निषेध है। ऋषि उद्यान के अंदर ही निवास करना होगा। समाचार-पत्र पढ़ने, आकाशवाणी सुनने, दूरदर्शन देखने की अनुमति नहीं है। धूम्रपान, तम्बाकू या अन्य किसी भी प्रकार के मादक द्रव्य का सेवन निषिद्ध रहेगा।

जो साधक इन नियमों तथा शिविर की दिनचर्या को स्वीकार करें वे मंत्री परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) से संपर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता-बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्-पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष चाहने वालों को अतिरिक्त शुल्क ५००-१००० रु. देय होता है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था उपलब्धता व पूर्व सूचना के अनुसार की जाती है। ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बरतन उपलब्ध हैं शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने-ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएं। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएं अन्यथा यहां भी क्रय किया जा सकता है। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। यदि अपने कार्य स्वयं न कर सकते हों तो सहायक साथ में लायें। अजमेर या निकटवर्ती स्थल (पुष्कर) देखना चाहें तो शिविर से पूर्व या पश्चात् अतिरिक्त समय निकाल कर आयें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुंचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने पीने की वस्तुएं साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जाता है। शिविर शुल्क १००० रु. मात्र जमा करना होगा। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबंधी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अंतिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, शुभकामनाओं के साथ।

मंत्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर दूरभाष : ०१४५-२४६०१६४

Web Site :- www.paropkarinisabha.com

E.mail address:- psabhaa@gmail.com

: मार्ग :

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो रिक्शा, रेल्वे स्टेशन व बस स्टेण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

मॉरिशस में आर्यसमाज आंदोलन के ध्वजवाहक

–रणजीत पांचाले

मॉरिशस में आर्यसमाज ने १०० वर्ष पूरे कर लिए हैं। भारतवंशियों की अनेक विभूतियों ने इस शक्तिशाली संगठन का स्वर्णिम इतिहास रचा है। उनके कारण अनेक झंझावातों का सामना करती हुई वैदिक धर्म की पताका इस देश में शान से फहरती रही है। 'भारतीय मेधा' दुनिया के जिस देश में भी है, वहाँ उसने अपना लोहा मनवाया है। मॉरिशस में भी भारतवंशियों ने अवसर पाकर जीवन के सभी क्षेत्रों में अपनी श्रेष्ठता सिद्ध की है। निस्संदेह, उनकी मेधा को निखारने में इन विभूतियों का भी महत्वपूर्ण भूमिका है। उनके अलावा पिछली एक सदी में भारत से समय-समय पर मॉरिशस पहुँचे आर्य विद्वानों ने भी महर्षि दयानन्द के विचारों से इस द्वीप देश के निवासियों को बड़ी संख्या में संस्कारित किया है। ऐसे आर्यवीरों को प्रह्लाद रामशरण ने अपनी पुस्तक 'मॉरिशसीय आर्यसमाज की विभूतियाँ' के माध्यम से शब्दांजलि दी है। यह पुस्तक हाल ही में नई दिल्ली (भारत) के स्टार पब्लिकेशन्स् से प्रकाशित हुई है।

प्रह्लाद रामशरण मूलत: इतिहासकार हैं। अपनी प्रकृति के अनुरूप उन्होंने यह पुस्तक गहन शोध करके लिखी है। उन आर्य सेवकों के बारे में प्रामाणिक जानकारी देने के लिए मॉरिशस के अभिलेखागार में पड़ी सामग्री को खंगाला है। उन्होंने पुस्तक की भूमिका में स्वयं लिखा है कि आर्यसमाज से जुड़े सेवकों पर सामग्री जुटाना लोहे के चने चबाना जैसा कार्य रहा है। इस पुस्तक को तैयार करने में उन्हें ४० वर्ष लगे हैं। अनेक विभूतियों के साथ उन्हें संवाद एवं सहकार का अवसर भी मिला है। उन्होंने यह पुस्तक एक इतिहासकार के दृष्टिकोण से लिखी है। इसीलिए इसमें दी गईं ६३ जीवनियाँ परिचय मात्र न होकर, महत्वपूर्ण ऐतिहासिक दस्तावेज बन गई हैं। रामशरण जी के अनुसार सभी तथ्यों की बारीक जांच के बाद जो सत्य सामने आया, उसी को उन्होंने पुस्तक में दिया है।

इस शोधग्रन्थ से पता लगता है कि एक भारतीय सूबेदार भोलानाथ तिवारी १८९८ में मॉरिशस में स्वामी दयानन्द कृत 'सत्यार्थप्रकाश' लाए थे। कई लोगों से होती हुई यह पुस्तक जब तोता लाल (खेमलाल) लाला के पास पहुँची, तो इसे पढ़कर वे आन्दोलित हो गए और उसके बाद महर्षि दयानन्द के विचारों के प्रचार में जुट गए। वे मॉरिशसीय आर्यसमाज के आद्य प्रवर्तक थे। उन्होंने क्यूर्पिप में आर्यसमाज की स्थापना की, लेकिन उसे आरम्भ में स्थायित्व प्राप्त न हो सका। विधिपूर्वक सबसे पहले आर्यसमाज की स्थापना १५ दिसम्बर, १९१० को पोर्ट लुई में हुई थी, जिसके प्रधान खेमलाल लाला, मन्त्री गुरु प्रसाद दलजीत लाल तथा पुस्तकाध्यक्ष, पं. गया सिंह खेलावन सिंह थे। इसमें १३ संस्थापक सदस्य थे। पहले उपदेशक पं. जगन्नाथ थे। कुछ समय बाद आर्य महिला मण्डल भी बन गया। आर्यसमाज स्त्री को घूंघट से बाहर लाया। उसे सार्वजनिक सभाओं में बोलने के लिए प्रेरित किया। उसकी नेतृत्व क्षमता को जगाया। सामाजिक परिवर्तन के संघर्ष में स्त्रियाँ भी साझीदार हो गई। भाग्यवती गया सिंह और कौशल्या बुलेल सरीखी महिलाएं उनका नेतृत्व कर रही थीं। सन् १९१३ में आर्य परोपकारिणी सभा की रजिस्ट्री हो गई। इस संस्था के जरिए १९१८ में वाक्वा में आर्यन् वैदिक स्कूल शुरू हुआ। दूसरे दशक के अन्त तक आर्यसमाज देश का एक मजबूत संगठन बन गया।

समग्र परिवर्तन के लिए विभिन्न क्षेत्रों में आर्यसमाज ने प्रवेश किया और अपनी अमिट छाप छोड़ी। इन जीवनियों में इसकी सिलसिलेवार कहानी भी है। खेमलाल लाला, गुरु प्रसाद दलजीत लाल इत्यादि आर्यसमाज के आदि संस्थापकों ने ईसाई प्रचारकों के हिन्दुत्व पर प्रहार का न केवल कड़ा उत्तर दिया, बल्कि ईसाई कुचक्रों से हिन्दू समाज को बचाए भी रखा। पं. आत्माराम विश्वनाथ आजीवन अविवाहित रहकर समाज सुधार के कार्यों में लगे रहे। जात-पात, बाल विवाह और दहेज प्रथा जैसी बुराइयों के खिलाफ जीवन के अन्त तक उन्होंने अपनी आवाज बुलंद रखी। हिन्दी की शिक्षा देने वाली कई पुस्तकों की रचना की। उन्होंने 'हिन्दुस्तानी', मॉरिशस आर्य पत्रिका', 'आर्य वीर', 'आर्यवीर जागृति' और 'आर्योदय' पत्रों का बड़ी कुशलता के साथ सम्पादन किया। उन्होंने अपने लेखों, सम्पादकीयों और पुस्तकों के माध्यम से हिन्दू जाति में आत्मगौरव की भावना को सुदृढ़ किया।

पं. काशीनाथ किष्टो को तो अविभाजित भारत में लाहौर के दयानन्द एंग्लो वैदिक कॉलेज में पढ़ने का सुअवसर मिला था और भारतीय आर्यसमाज के महान् पथ-प्रदर्शक पं. हंसराज का सान्निध्य भी प्राप्त हुआ था। उन्होंने मॉरिशस के अनेक भागों में आर्यसमाज का विस्तार किया। हिन्दी-शिक्षा के प्रसार में उनकी महती भूमिका रही। पत्रकार के रूप में उन्होंने सामाजिक बुराइयों और अंधविश्वासों पर कड़े प्रहार किये। महिलाओं के अधिकारों के लिए लड़े। नैतिक मूल्यों को समाज में पुनर्प्रतिष्ठित करने के लिए जीवनपर्यन्त प्रयत्न करते रहे।

मॉरिशस के पौराणिक समाज में स्वामी दयानन्द के प्रगतिशील दर्शन को जन-जन तक पहुँचाना आसान नहीं था। पं. रामखेलावन शर्मा, छत्तर मास्टर, जगनन्दन लाल, पं. देवशरण शहजादा आदि ने अनेक विरोधों का सामना करते हुए लोगों को

अंधविश्वासों से दूर करके उन्हें सच्चे वैदिक ज्ञान से जोड़ा। वृद्धजनों की सहायता के लिए वानप्रस्थी धुरंधर ने वृद्धाश्रम खोला। पं. अनिरुद्ध शर्मा ने अपने पोर्ट लुई स्थित 'सरस्वती पुस्तकालय' में प्रचुर मात्रा में आर्ष साहित्य उपलब्ध कराया। नन्द किशोर सदल ने शिक्षा के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण कार्य किया। वाक्वा शहर का क्वीन कॉलेज जिसका नाम उनकी मृत्यु के बाद नन्द किशोर सदल कॉलेज कर दिया गया, उन्हीं की देन है। अपने अनुकरणीय आचरण से उन्होंने अच्छे छात्र और अध्यापक पैदा किए। लगभग एक दर्जन संस्थाओं को उन्होंने अपनी सेवाएँ दीं।

कई आर्यवीर पं. हरिकृष्ण विशारद, पं. रामावध, पं. काशीनाथ, पं. रामलखन, पं. वेणीमाधव सतीराम, पं. लक्ष्मण दत्त शास्त्री आदि भारत के गुरुकुलों, विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में पढ़कर आए। इनसे आर्यसमाज आन्दोलन को काफी गति मिली। धर्मशास्त्रों के ज्ञान के अलावा ये ज्योतिष शास्त्र, संगीत और आयुर्वेद का भी ज्ञान प्राप्त करके मॉरिशस लौटे थे। इनके ज्ञान से मॉरिशस बहुत लाभान्वित हुआ। ये लोग पिछली सदी के द्वितीय और तृतीय दशकों में भारत गए थे। इन्होंने स्वतन्त्रता आन्दोलन को नजदीक से देखा। कुछ को तो महात्मा गांधी, मुंशी प्रेमचन्द, रवीन्द्रनाथ टैगोर और स्वामी श्रद्धानन्द के दर्शनों का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ था।

विदुषी सुदेवी भीमा ने कई महिला समाजों को जन्म दिया। उन्होंने महिला मण्डल का १५ वर्षों तक नेतृत्व किया और देश के विभिन्न भागों में ओजस्वी भाषण दिए। लखावती हरगोविन्द भी एक सुयोग्य नेत्री थीं। उन्होंने महिला मण्डल का दो दशकों तक संचालन किया। धार्मिक, सामाजिक तथा ऐतिहासिक विषयों पर 'आर्योदय' में खूब लेख लिखे। धनवन्ती रामचरण का भी विशिष्ट योगदान रहा। वे आर्य महिला मण्डल की प्रधान रहीं। उन्हें देश का प्रतिष्ठित नागरिक सम्मान 'एम.एस.के.' मिला था।

आर्यसमाज के माध्यम से भारतवंशियों में जो जागृति आई तथा शिक्षा का प्रसार हुआ उसके कारण शर्तबन्दी मजदूर समुदाय से कुछ ही वर्षों में सुयोग्य राजनीतिज्ञ, वकील, बैरिस्टर, डॉक्टर और इंजीनियर निकलने लगे। इस क्रम में १९५० में एक आयाम शास्त्रीय संगीतज्ञ के रूप में ईश्वरदत्त नंदलाल ने जोड़ा। आजादी के बाद जिस तरह से भारतवंशियों ने देश का नेतृत्व किया है, वह सर्वविदित है। विभिन्न क्षेत्रों में आर्यसमाजी विभूतियों के कार्यों को व्यापक सराहना मिली है। वर्ष १९७८ में रामसुभग गोवर्धन को 'ओ.एस.के.', प्रेमहंस श्री किसुन को 'ओ.एस.के.', सत्यदेव प्रीतम को १९९३ में 'ओ.एस.के.' और फिर छह साल बाद 'सी.एस.के.', मिला। मोहन लाल मोहित को १९९७ में सर्वोच्च नागरिक सम्मान 'जी.ओ.एस.के.' मिला। प्रोफेसर सुदर्शन जगेसर ने अनेक सरकारी संस्थानों में उच्च पदों पर रहकर अपनी असाधारण योग्यता का परिचय दिया है।

पुस्तक के प्रथम भाग में रामशरण मोती, पं. महावीर कीनू, पं. बलराम अपाडू, पं. नारायण संजीवी, रामप्रसाद नियूर, पं. रामरूप रामलगन, रामधन पूरण, शिवगुलाम तोरल, दीप नारायण पदारथ, पं. रामावतार नाथ वर्मा, तिलक प्रसाद कालीचरण, रामलाल गुमानी, पं. सुखदेव (रामप्यार), ब्रह्मदत्त नन्दलाल, पं. देवकी नन्दन गोबिन, तारामन बन्धन, मुनीन्द्रनाथ वर्मा, पं. दीनदयाल बन्धन, केशवदत्त चिन्तामणि, मूलशंकर रामधनी, प्रह्लाद रामशरण, भरत मंगरू, धनवन्ती रामचरण, डॉ. उदयनारायण गंगू, पं. राजमन रामसाह, पं. धर्मेन्दु रिकाय, हरिदेव रामधनी आदि की भी जीवनियाँ हैं।

भारत से आए उन नौ आर्य विद्वानों की संक्षिप्त जीवनियाँ भी पुस्तक में दी गई हैं जिनके विचारों तथा कार्यों का मॉरिशस के भारतवंशियों पर गहरा प्रभाव पड़ा था। स्वामी ध्रुवानन्द के आदर्श चरित्र, त्याग और तपस्या ने अनेक लोगों की जीवन-दशा बदल दी थी। स्वामी अभेदानन्द को दी गई शब्दांजलि से पता लगता है कि वे मॉरिशसीय आर्यसमाज में कितने लोकप्रिय थे। स्वामी ज्ञानानन्द (मेहता जैमिनी) ने १९२५ में मॉरिशस में आर्यसमाज की २८ शाखाएँ खोली थीं। यहाँ मात्र २८५ दिन रहकर वे अमिट छाप छोड़ गये। डॉ. चिरंजीव भारद्वाज, स्वामी स्वतन्त्रानन्द, स्वामी सोमानन्द, ओमप्रकाश त्यागी, स्वामी दिव्यानन्द और डॉ. ऊषा शर्मा की जीवनियों से मॉरिशसीय आर्यसमाज में उनके महत्वपूर्ण योगदान का पता लगता है।

आर्यसमाज की नई पीढ़ी इनमें से अधिकांश विभूतियों को विस्मृत कर चुकी होगी। दो सौ छब्बीस पृष्ठों की इस पुस्तक ने उनकी स्मृति को चिरस्थायी कर दिया है। भविष्य में मॉरिशस में आर्यसमाज आंदोलन के विकास पर शोध करने वालों के लिए यह पुस्तक बहुत उपयोगी साबित होगी।

-सी-२६९/१४, राजेन्द्र नगर, निकट-बालाजी मंदिर, बरेली-२४३१२२, उ.प्र., चलभाष ९९२७३१८१११

भूल-सुधार

परोपकारी पत्रिका अप्रैल-प्रथम-०१३ में लेख **'मृत्यु के बाद के अनुभव व पुनर्जन्म'** पृष्ठ-८ पर भूलवश लेखक का नाम **'सुनील वैदिक'** के स्थान पर **'नरेन्द'** व **N.D.E.(एन.डी.ई.)** के स्थान पर **N.O.E. (एन.ओ.ई.)** छप गया है। कृपया लेखक का नाम **'नरेन्द्र'** के स्थान पर **'सुनील वैदिक'** व **N.O.E. (एन.ओ.ई.)** के स्थान पर **N.D.E.(एन.डी.ई.)** पढ़ा जावे। असुविधा के लिये क्षमा चाहते हैं।

भावजगत से अपेक्षित सहयोग : अन्तर्मन का आनन्द और सहजता से सम्पूर्णता की अनुभूति

-डॉ. अजय शुक्ला

संवेदनशील मनोभाव-जीवन की गतिशीलता को स्वीकार करते हुए सदैव इस स्थिति की तत्परता बरतना आवश्यक हो जाता है, जिसके अन्तर्गत् भाव-जगत् से सहयोग प्राप्त करने के मनोभाव जुड़े हुए होते हैं। अन्तर्मन का सात्विक परिदृश्य चेतना और चिन्तन के प्रारूप को समझने का प्रयास तो करता है, परन्तु अपनी उपस्थिति को प्रत्येक परिस्थिति में निर्णायक भूमिका के लिए तैयार नहीं कर पाता है। प्रकृति की सजीवता के मध्य स्वयं को स्थापित करने के साथ गुणात्मक स्थितियों के लिए आन्तरिक संघर्ष और उसमें सफल होने की उत्कण्ठा इस बात के लिए निरन्तर प्रेरणा प्रदान करते हैं जिसमें भावजगत् से अपेक्षित सहयोग की अभिलाषा किसी न किसी स्वरूप में अन्त:करण को उद्वेलित करती रहती है। व्यक्ति के जीवन का भावनात्मक पक्ष अत्यधिक निर्मलता के साथ मुखरित होना चाहता है लेकिन विशुद्ध स्वरूप में उसकी उपयोगिता अन्तिम स्थिति तक बनी रहे उससे पूर्व ही स्वार्थपूर्ण मनोवृत्तियाँ अखण्डित भाव को खण्डित कर पुनर्विचार के लिए बाध्य कर दिया करती हैं। व्यावहारिक स्तर पर संवेदनशील मन:स्थिति के द्वारा जितने भी प्रयास किये जाते हैं उसमें इस बात की गुँजाईश होती है कि परिणाम तक पहुँचने के लिए जिन अवस्थाओं से व्यक्ति को गुजरना पड़ता है उसमें पश्चाताप की स्थितियाँ कई बार निर्मित हो जाया करती हैं। स्वयं की संवेदनाओं के प्रति अधिकतम सतर्कता कहीं न कहीं व्यक्तिगत जीवन के मूलभूत मनोभाव को अभिव्यक्त करने में सक्षम सिद्ध हो जाया करती हैं जिसमें अन्तर्मन के आनन्द का बृहद् स्वरूप समाहित रहता है। मानवीय व्यवहार से सम्बद्ध स्थितियों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण संवेदनशील पक्षों को जब सहजता से प्रस्तुत करता है तब सम्पूर्णता की अनुभूति प्राप्त करना सरल हो जाता है।

व्यक्तिगत जीवन के सन्दर्भ को निष्पक्ष योगदान के लिए समर्पित करने पर किन्हीं प्रसंगों में यदि संवेदनाओं की प्रासंगिकता को स्वीकार नहीं किया जाता तब विरोधाभासी परिस्थितियों का उत्पन्न होना स्वाभाविक हो जाता है। संवेदना के स्तर पर विवेकपूर्ण विचार की उपस्थिति कभी भी गौण नहीं होती बल्कि कल्याणकारी स्वरूप में अपनी उपलब्धता को सार्थकता में परिवर्तित करने का प्रभावी प्रयास करती है जिससे आत्मिक आभास की व्यावहारिकता को मानवता के उत्कर्ष हेतु अक्षुण्य बनाये रखा जा सके। ज्ञान और समझ के आधार से कई बार ऐसा प्रतीत होता है कि विभिन्न विरोधाभासी परिवेश में कोई न कोई जीवन का यथार्थवादी प्रसंग हमारे लिए उदाहरण बनकर ठोस उपाय के रूप में मददगार बन जाएगा लेकिन इसकी सुनिश्चितता तभी संभव हो पाती है जब भावजगत् से अपेक्षित सहयोग उस निश्चित समय पर प्राप्त हो जाए। जीवन में उर्ध्वगामी अवस्था की ओर अग्रसर होते हुए सहजता से सम्पूर्णता की अनुभूति का दार्शनिक पक्ष अत्यधिक उजला होता है, जिसे प्राप्त करने के लिए भावजगत् को समृद्धशाली बनाने का भागीरथ पुरुषार्थ आवश्यक है तभी अन्तर्मन के आनन्द से व्यावहारिक प्रेरणा का प्रस्फुटन स्वयं के साथ-साथ सर्व को आलोकित कर सकेगा। संवेदनशील मनोभाव की मानवीय अभिव्यक्ति चेतन, अवचेतन और अचेतन मन के मध्य एक सकारात्मक सहसम्बन्ध स्थापित कर देती है जिससे भावनात्मक स्थितियों की विशुद्धता अखण्ड स्वरूप में अनवरत कार्य करती रहती है।

निष्पक्ष योगदान-स्वयं के समर्पण का स्वरूप जब व्यक्ति, घटना, विचार एवं व्यवस्था के सन्दर्भ में घटित होने की स्थितियों से निर्मित होता है तब भावजगत् की वास्तविकता पूर्णतया बोध के स्तर पर कार्यरत रहती है। विभिन्न प्रसंगों में जिन संवेदनाओं के साथ गतिशीलता की प्रासंगिकता प्रकट होती है, लगभग उसी स्वरूप में उसे स्वीकार किया जाना चाहिए अन्यथा विद्रोह अथवा बदले की भावना उत्पन्न हो जाया करती है। कई बार भावजगत् अपनी अभिव्यक्ति को व्यावहारिक रूप में क्रियान्वयन हेतु अवसर प्रदान करता है, परन्तु स्थिति के अभाव के कारण वाँछित सफलता प्राप्त नहीं हो पाती है। मानवीय भावनाओं से सम्बद्ध अपेक्षाएँ अपने आरम्भिक काल में अनिवार्य आवश्यकताओं का अध्ययन करके गतिशील हुआ करती हैं, जिसे स्वार्थपूर्ण मनोवृत्तियों के दबाव का यदाकदा दु:ख भी सहन करना पड़ता है। अन्तर्मन की आवाज के प्रति उदासीनता की सामान्य आदत एवं स्वभाव के कारण प्राय: भावजगत् के निष्पक्ष योगदान को अनुभव के स्तर पर स्वयं के कल्याण हेतु स्वीकार कर लेना वर्तमान सन्दर्भों में कठिन होता जा रहा है। भावजगत् की भूमिका के ऊपर कोई प्रश्न चिह्न नहीं है बल्कि सर्वाधिक चिन्ता इस बात की है कि आखिर किन परिस्थितियों ने भावनात्मक पृष्ठभूमि से मानव जाति को अलग कर दिया है। व्यक्तिगत जीवन की शुचिता आराध्य के प्रति भक्ति-भाव की उत्पत्ति को किसी भी प्रकार से फलीभूत होते देखना चाहती है लेकिन दैनिक गतिविधियों में समाहित हो चुकी कर्मकाण्ड की व्यावहारिकता इतनी दबावयुक्त होती है कि श्रद्धा एवं विश्वास जैसे मूलभूत शब्दों के भाव वास्तविकता से कहीं दूर चले जाते

हैं। स्वयं की सोच और समझ को जब सर्वश्रेष्ठ मानकर सहर्ष स्वीकार कर लिया जाता है तब यह तय करना मुश्किल हो जाता है कि निजी जीवन के उत्थान हेतु भावजगत् का स्वरूप किस सीमा तक अपना योगदान निरूपित कर पाने में सफलता प्राप्त कर सकता है।

जीवन की व्यापकता का अनुभव उन विशिष्ट स्थितियों में सम्भव हो पाता है जब भावजगत् की पूर्णता का समर्पित स्वरूप किन्हीं अपेक्षाओं से संचालित न होकर स्वतन्त्र अस्तित्व के साथ अपनी गरिमामय प्रस्तुति को सुनिश्चित कर पाता है। ज्ञान के आधार पर किये जाने वाले पुरुषार्थ में विभिन्न स्थितियों की विवेचना और उनका समयानुसार मूल्यांकन तार्किक विधि से संतुष्टि एवं असंतुष्टि के संदर्भ में प्राय: होता रहता है लेकिन भावजगत् से सम्बद्ध प्रसंगों में आंशिक प्राप्ति की गुंजाईश किसी परिणाम के लिए नहीं अपितु केवल भाव-विभोर हो जाने की परिणिति ही परिलक्षित होती है। सामान्य गतिविधियों की अवधारणा पर कार्य करते हुए व्यक्तिगत जीवन की बौद्धिकता के द्वारा उच्च स्तर की भावपूर्ण अभिव्यक्ति के लिए शब्द, अर्थ, चिन्तन और किसी तरह के भौतिक स्वरूप की मान्यताओं को स्वीकार करने एवं कराने की चेष्ठाएँ भावजगत् की विशुद्धता पर कुठाराघात कर दिया करती हैं। मानवीय प्रवृत्तियों का वास्तविक स्वरूप सदा इस बात से भयभीत रहता है कि यदि भावजगत् की अनुभूतियों को अपनी शक्तियों के द्वारा प्रस्तुत नहीं किया गया तो स्वयं के अस्तित्व को कैसे स्थापित किया जा सकता है और इसी द्वन्द्व के कारण भावनाओं की गतिशीलता को श्रेष्ठ मनोभावों के माध्यम से स्थानान्तरित करने की स्थितियाँ निर्मित नहीं हो पाती हैं। जीवन में भावजगत् के प्रति सजगतापूर्ण व्यवहार सदा इस वास्तविक सत्य को रेखाँकित करता है, जिसमें स्वयं की आन्तरिक भावनाओं के लिए अधिकतम सकारात्मक सहयोग की महत्ता सम्मिलित है, जिससे भावजगत् के केन्द्रीय स्वरूप को पूर्णतया विकसित होने में मदद मिल सके।

आत्मिक आभास-मानवता के लिए समर्पित जीवन को निरन्तर उत्थान के परिदृश्य पर कार्यरत रहना पड़ता है जिसके परिणाम स्वरूप ऐसे कई मोड़ मार्ग में आते हैं जिसके अन्तर्गत आत्मिक आभास का स्पष्ट साक्षात्कार होता है। सामान्य दृष्टि से विचार करते हुए यदि देखा जाए तो अधिकतम कार्यों की पूर्णता अपनी गति से होती रहती हैं इसी तारतम्य में कुछ महत्वपूर्ण परिस्थितियों की उत्पत्ति होती है और विशिष्ट निर्णयन के सहयोग से अनूठे कार्य अनायास ही सम्पन्न हो जाया करते हैं। भावजगत् से समयानुसार व्यक्तिगत् जीवन में अपेक्षित सहयोग प्राप्त होता रहे इसके लिए आत्मिक आभास की स्थितियों को गहराई से समझना आवश्यक होता है। कई बार किन्हीं स्थितियों को लेकर स्वयं तथा कुछ परिस्थितियों में समीप के व्यक्तियों को अनायास ही शुभ-अशुभ का आत्मिक आभास होता है जिसके अनुसार साधारण से लेकर विशिष्ट कार्यों में व्यक्तिगत, सामूहिक तथा सामाजिक बदलाव की स्थितियाँ निर्मित हो जाया करती हैं। जीवन की गतिशीलता में उच्च अवस्थाओं का प्रस्तुतीकरण किन परिस्थितियों में उत्पन्न होकर फलीभूत होता है और उसका बोध अनुभूति के क्षेत्र को व्यापक बनाकर मानवता के उत्थान में अपनी अमिट छाप को प्राय: आत्मिक आभास के रूप में सदा के लिये अंकित कर दिया करते हैं। यदि भावजगत् से अपेक्षित सहयोग प्राप्त करना है तो भावनात्मक स्तर के व्यापक स्वरूप में चेतना की विभिन्न अवस्थाओं के मध्य सकारात्मक सहसम्बन्ध बनाना आवश्यक है, जिससे स्वयं के आत्मिक अस्तित्व की रक्षा को सुनिश्चित किया जा सके।

जीवन की प्रक्रिया में आत्मिक आभास और उत्कृष्टता का अनुभवी स्वरूप जब एकाकार होता है तब भावजगत् का व्यावहारिक क्रियान्वयन अन्तर्मन के आनन्द से स्वमेव सम्बद्ध हो जाता है। औपचारिक व्यवहार का निरन्तर प्रयोग आत्मिक आभास की सात्विक उपादेयता से व्यक्ति को दूर कर देता है, जबकि अनौपचारिक जीवन की वास्तविक प्रस्तुति भावजगत् के अत्यधिक निकट होती है जिसके सुखद परिणाम सहजता से सम्पूर्णता की अनुभूति तक पहुँचाने में मददगार बन जाया करते हैं। सामान्य जीवन की गतिशीलता के अन्तर्गत यदि स्वयं की मूलभूत प्रवृत्ति पर ध्यान दिया जाये, तो यह पता चलता है कि आत्मिक स्थिति के आभास हेतु किस स्तर के पुरुषार्थ की अनुभूति व्यावहारिक जीवन में की जा रही है जिससे भावजगत् से अपेक्षित सहयोग सहज रूप से प्राप्त किया जा सके। निजी जीवन के वास्तविक अनुभव इस तथ्य की अभिव्यक्ति करने में सदा समर्थ होते हैं जिसके अन्तर्गत भावजगत् के रहस्योद्घाटन विशिष्ट रूप से समाहित रहते हैं और समयानुसार व्यक्ति को भावनात्मक सुदृढ़ता प्रदान करने में अपनी सार्थक भूमिका निभाया करते हैं। व्यक्तिगत जीवन के उत्कर्ष को प्राप्त करने की अभिलाषा जब लक्ष्योन्मुखी स्वरूप में परिणित हो जाती है तब आत्मिक आभास की निरन्तरता ही भावजगत् से अपेक्षित सहयोग प्राप्त करने के निमित्त बन जाती है।

व्यावहारिक प्रेरणा-अन्त:करण में सदा सकारात्मक भाव उमड़ता रहे और जीवन की गतिशीलता हेतु अपेक्षित सहयोग की स्थितियाँ बनती रहें, प्राय: ऐसा सुनिश्चित हो पाना संभव प्रतीत नहीं होता है। सैद्धान्तिक दृष्टि से आदर्श स्थितियों की कल्पना और उनका व्यावहारिक स्वरूप के अन्तर्गत व्यक्तिगत स्तर पर उच्चता का बोध निश्चित ही मन में संतोष के भाव को जागृत करने में सफल रहता है। जीवन में कर्म जगत् के अनुभव अपनी वास्तविक अनुभूतियों को अभिव्यक्त करने में सक्षम हुआ करते हैं जिसमें सामान्यत: अतीत, वर्तमान एवं भविष्य के सन्दर्भ में पठन-पाठन, मनन-चिन्तन, वर्णन-

विश्लेषण, निर्वचन-निष्कर्ष, सिद्धान्त-व्यवहार, निर्णय-निर्माण के साथ स्वीकृत-मनोभावों का विशेष योगदान होता है। किसी परिवेश में भावजगत् की सहभागिता को उस समय फलीभूत रूप में स्वीकार कर लिया जाता है जबकि विपरीत परिस्थितियों के भीतर सात्विक प्रवृत्ति के सुखद भाव अपनी नैतिकता के सान्निध्य में व्यक्तिगत स्तर पर मन:स्थिति में विद्यमान रहते हुए सही दिशा में अग्रसर रहने के लिए स्वयं के साथ-साथ अन्य व्यक्तियों को भी अभिप्रेरित करने में पूर्णत: सफल हो जाएँ। कई बार जीवन की सहजता का स्वरूप इतना व्यापक हो जाता है कि वह एक पक्ष के लिए अन्तर्मन के आनन्द से सम्बन्धित रहता है तो दूसरे पक्षकार के सन्दर्भ में भावजगत् से अपेक्षित सहयोग की प्रासंगिकता को प्रश्नवाचक स्थितियों में लाकर खड़ा कर देता है जिसमें प्राय: प्रत्युत्तर की गुंजाईश के लिए शब्द, अर्थ, भाव एवं उनके विश्लेषण से जुड़ी स्थितियाँ लगभग सभी आश्चर्यचकित तथा अनुत्तरित मुद्रा में परिवर्तित हो जाया करती हैं। भावजगत् से अपेक्षित सहयोग व्यावहारिक रूप से प्राप्त हो सके इस स्थिति की मनोवैज्ञानिक अवधारणा यह अभिव्यक्त करती है कि व्यक्ति को स्वयं मानवीय मूल्यों एवं दिव्य गुणों को धारण कर उसके नियमित अभ्यास, ज्ञान के निरन्तर चिन्तन, आत्मिक स्थिति में रहने के लिए ध्यान की श्रेष्ठ अवस्था और जीवन की दिनचर्या में सेवाभाव के व्यवहार द्वारा सब को संतुष्ट करने का पुरुषार्थ अपने जीवन में अन्तत: समाहित करना ही होगा।

संवेदनाओं के स्तर पर भावजगत् से अपेक्षित सहयोग को व्यावहारिक जगत् में स्थायित्व प्रदान करने हेतु जीवन की नकारात्मक इच्छाओं एवं कुण्ठाओं से स्वयं को पूर्णत: मुक्त करने की आवश्यकता को गम्भीरता से स्वीकार करने हेतु प्रयास करना पड़ेगा। अन्तर्मन के आनन्द को सदैव बनाये रखने के लिए भावजगत् का निष्पक्ष योगदान रहता है लेकिन अप्राप्ति की जिजीविषा, स्वार्थपूर्ण मानसिकता को क्षणिक मनोकामना से सम्बद्ध कर देती है, जिससे व्यक्तिगत जीवन, इन्द्रिय सुखों को सबकुछ मानकर स्वयं को उपभोगवादी प्रवृत्ति से जोड़कर निराशा की अनजानी स्थितियों में पहुँच जाया करता है। जीवन की विविधता के मध्य व्यक्ति को किसी न किसी रूप से भावजगत् से अपेक्षित सहयोग आत्मिक आभास की व्यावहारिकता के द्वारा प्राप्त होता रहता है लेकिन वर्तमान समय के प्रति चेतना शून्य मन:स्थिति को घटित स्थितियों के साथ प्रवाहित हो जाने के लिए स्वयं को निश्चिन्त कर देना असफल सोच का परिचायक होता है। भावजगत् की गरिमामय उपस्थिति जीवन की शुचिता को उच्च शिखर तक पहुँचाने में सफल होती है और व्यक्तिगत स्तर पर यह स्वीकृति, उपलब्धि में परिवर्तित होकर निर्बलता पर निर्मलता की विजय के रूप में चहुँ ओर परिलक्षित होने लगती है।

अखण्ड चेतना-विराट स्तर पर जीवन को सर्वश्रेष्ठ स्वरूप में प्राप्त करने की अभिलाषा का गहन बोध मनुष्यता की उच्चता का प्रमाण होता है। व्यक्तिगत जीवन की सात्विक गतिशीलता इस बात को सदैव रेखांकित करती है जिसके अन्तर्गत भावजगत् से अपेक्षित सहयोग की निरन्तरता का सकारात्मक सम्बन्ध बना रहता है। मानवीय चिन्तन की व्यापकता अन्तर्मन के आनन्द को जीवन के बहुआयामी स्वरूप में परिवर्तित करने के लिए प्रयासरत रहती है, जिसे भावजगत् की निर्मलता से पूर्ण किया जा सकता है। जीवन में अत्यन्त लघु स्वरूप में परिलक्षित होने वाले कर्मों के प्रति अत्यधिक संचेतना से भरे-भाव निजी मानस को भाव-विभोर बनाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करते हैं। अन्त:करण की चेतना के विभिन्न पक्षों में सहजता को विकसित कर लेने से जीवन की संवेदनशीलता के प्रति न्याय किया जा सकता है और यही दृष्टिकोण व्यक्ति को सम्पूर्णता की अनुभूति तक पहुँचा देने में मददगार सिद्ध होता है। जीवन में लगभग सभी व्यक्तियों के साथ भावजगत् की भूमिका पूर्णतया निष्पक्षता से ओत-प्रोत स्वरूप में रहती है, केवल उसे पवित्र भावनाओं के साथ स्वीकार करने की आवश्यकता होती है।

निजी स्तर पर जब कोई निर्णय लिया जाता है तब भावजगत् का स्वरूप अपनी सहभागिता को विभिन्न स्थितियों में आत्मिक आभास के माध्यम से सम्प्रेषित करने की चेष्टा किया करते हैं, जिसे व्यक्ति समयानुसार जाने-अनजाने रूप में तार्किक शक्ति का प्रयोग करके स्वयं को सन्तुष्ट करने का प्रयत्न करता रहता है। जीवन के उत्थान की दिशा को तय करते समय व्यावहारिक प्रेरणा ही कारगर उपाय के रूप में अपनी सार्थक उपस्थिति को सुनिश्चित करती है, जिसे सात्विक मनोभावों के द्वारा स्वीकृत किया जा सकता है। विपरीत परिस्थितियों के निर्मित होने पर भी भावजगत् से अपेक्षित सहयोग प्राप्त होता रहे, इसके लिए अखण्ड चेतना की जागृत अवस्था को सदा जीवन की वास्तविक सच्चाई से सम्बद्ध करके अनुभव किया जाना चाहिए, जिसमें अच्छाई के प्रति सकारात्मक दृष्टि और उसकी निरन्तर स्मृति विभिन्न स्वरूपों में सीखने की संस्कृति को विकसित करते हुए स्वयं को अभिप्रेरित किया करती है। अत: जीवन की यथार्थता को समझकर सदैव भावजगत् से अपेक्षित सहयोग प्राप्त करते हुए अन्तर्मन के आनन्द को बनाये रखना चाहिए, जिससे सहजता से सम्पूर्णता की अनुभूति को सुनिश्चित किया जा सके।

-८६-बी सेक्टर, कमला नगर, पिपलानी,
भोपाल, चलभाष-९८२६४४९३८५
ईमेल-dr.ajay_writertrainer@yahoo.com

आवासिकं संस्कृत–भाषा–शिक्षण–प्रशिक्षण–शिविरम्

लोक-भाषा-प्रचार-समिति-राजस्थानशाखाया: परोपकारिणीसभायाश्च मिलितोद्यमेन अजमेरनगरे आवासिकं संस्कृतभाषाशिक्षण-प्रशिक्षण-शिविरम् आयोज्यते।

अवधि: - १७-०५-२०१३ त: २६-०५-२०१३ (दश दिनात्मकम्)
(१६-०५-२०१३ दिनांकस्य सायंकालपर्यन्तं शिविरस्थलम् ऋषि-उद्यानं प्राप्तव्यमेव भविष्यति।)

स्थानम् - ऋषि-उद्यानम्, पुष्करमार्ग:, अजमेर-३०५००१, दूरभाष:- ०१४५-२६२१२७०

योग्यता - संस्कृते रुचिमन्त: संस्कृत-आचार्या:, अध्यापका:, संस्कृतछात्रा:, उच्च माध्यमिक-वरिष्ठोपाध्याय-बी.ए./एम.ए./शास्त्रिकक्षा/आचार्यकक्षाछात्राश्च।

शुल्कम् - ३०० रुप्यकाणि।

व्यवस्था - एतद् शिविरम् आवासिकमस्ति, प्रशिक्षणार्थिनां भोजनावास व्यवस्था शिविरस्थाने भविष्यति
- बालिकानां, नारीणां कृते च पृथक् निवास व्यवस्था वर्त्तते, शिविरार्थिन: नित्योपयोगिनि वस्तूनि, शय्यावस्त्राणि लेखनसामग्री: च आनयेयु:।

स्वरूपम्- शिविरे अहोरात्रम् अखण्डं संस्कृतमयवातावरणम्,
- संस्कृतेन धाराप्रवाहं सम्भाषणस्य अभ्यास:,

विशेष - **संस्कृत-सम्भाषण सीखने का इच्छुक कोई भी व्यक्ति या विद्यार्थी सुबह ९ से ११ बजे तक शिविर में भाग ले सकता है।**

डॉ. धर्मवीर:	**डॉ. बद्रीप्रसाद पंचौली**	**डॉ. निरञ्जन साहु:**
अध्यक्ष:	कोषाध्यक्ष:	सचिव:
	०१४५-२४२५६६४	०९५१४७०९४९४

संपर्क- **१.** श्री जितेन्द्र थदानी, प्रध्यापक (संस्कृतम्), राजकीय महाविद्यालय, अजमेर, मो. ९२१४५२३५०५ २. डॉ. कृष्णराम महिया, प्राध्यापक:, सनातन धर्म राजकीय महाविद्यालय, ब्यावर, मो. ८१०४८४६४३४ **३.** डॉ. आशुतोष पारीक:, प्राध्यापक:, मो. ९४६०३५५१७२।

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित आगामी कार्यक्रम

१. १७ से २६ मई-**संस्कृत संभाषण शिविर**, सम्पर्क : ९४१४७०९४९४

२. २८ मई से ४ जून-**आर्यवीर दल शिविर**, सम्पर्क : ९४१४४३६०३१

३. ६ से १३ जून-**आर्य वीरांगना शिविर**, सम्पर्क : ९४१४४३६०३१

४. १६ से २३ जून-**योग-शिविर**, सम्पर्क : ०१४५-२४६०१६४

५. विद्वद् गोष्ठी-'**आर्यसमाज की यज्ञपद्धति**' तृतीय, (मात्र आमन्त्रित विशेषज्ञों के लिए), २७ से ३० जून २०१३, आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय, नर्मदापुरम् होशंगाबाद, मध्यप्रदेश।

६. २० से २७ अक्टूबर-**योग-शिविर**, सम्पर्क : ०१४५-२४६०१६४

सुख के चाहक तीन प्रकार के लोग

–कमलेश कुमार छ. शास्त्री

संसार में जितने भी लोग हैं, ये सभी सुख चाहते हैं। पर, वे सुख को क्यों चाहते हैं, इस पर कभी विचार नहीं करते। हमारे विचार से सुख को चाहने वाले लोगों को हम तीन भाग में बांट सकते हैं। जैसे–

१. सुख की प्राप्ति के लिये सुख–कुछ लोग सुख को इसलिये चाहते हैं कि सुख दुसरों के पास है। यह उनके पास नहीं रहना चाहिये। सुख को तो मात्र मेरे अकेले के पास ही होना चाहिये। इस धारणा से ऐसे लोग सुख की कामना करते हैं। वे न तो सुख को भोगना चाहते हैं, और न ही सुख का दान ही करना चाहते हैं। ऐसे लोग दया के पात्र हैं। इनके लिये कहने को हमारे पास कुछ भी नहीं है। इन्हें कुछ कहना भी बेकार है।

२. सुख को भोगने के लिये सुख–कुछ लोग सुख को इसलिये चाहते हैं कि वे सुख को भोग सकें। दूसरे लोग सुख भोग रहे हैं, मैं भी सुख को भोगूँ, इस एकमात्र कामना से वे सुख की कामना करते हैं। ऐसे लोग दीक्षा के पात्र हैं। इनके लिये एक दीक्षा लेनी जरूरी है। क्योंकि इन्होंने यदि दीक्षा न ली, तो ये लोग भी दया के पात्र बन जायेंगे।

इन्हें यह दीक्षा लेनी है कि हम सुख को भोगते हुए स्वयं विराम या त्याग करते रहेंगे। वस्तुत: जिन लोगों के पास सुख है उन्हीं लोगों के पास दु:ख चला आता है, ऐसा कहा जाता है। इसका कारण यही है कि आप सुख को भोगते हुए उसे छोड़ देने का, सुख भोग से अटक जाने का उपक्रम नहीं करेंगे, तो वही आपका सुख अपने आप दु:ख में बदल जायेगा। उदाहरण के रूप में विचारें, तो एक आदमी को रसगुल्ला खाने में सुख प्राप्त हो रहा है। पर यदि वह रसगुल्लों को खाता ही चला जाए, तो पांच–पच्चीस रसगुल्ले खाने के बाद स्वयं ही रसगुल्ला खाना अब उसके लिये दु:ख बन जायेगा। इसलिये यदि कोई आदमी रसगुल्लों को खाने में सतत सुख चाहता है, तो उसे कुछ रसगुल्ले खा लेने के बाद स्वयं ही उन्हें खाना बन्द कर देना चाहिये। इस प्रकार वह रसगुल्लों के खाने का त्याग कर, कुछ समय तक तप कर लेता है, और उसके बाद (कुछ समय के बाद) उन रसगुल्लों को फिर खाने का उपक्रम करता है, तो उसे रसगुल्ले खाने में सुख प्राप्त होता है। यदि वह रसगुल्ले खाता हुआ, उस रसगुल्ले के खाने रूप सुख का परित्याग नहीं करता है, तो उसे वहीं रसगुल्ले सुख के स्थान पर दु:ख देने लग जाते हैं।

अत: जो सुखों की प्राप्ति भोगने के लिये करना चाहते हैं, उन्हें सुख के त्याग करने की दीक्षा लेनी ही होगी। अन्यथा वे भी दया के पात्र बन जायेंगे।

३ सुख के दान के लिये सुख–तीसरे प्रकार के लोग सुख की कामना दान देने के लिये करते हैं। वे चाहते हैं कि हमें सुख की प्राप्ति हो, जिससे कि हम उस सुख को किसी प्राणी के लिये दान कर सकें। वास्तव में इस प्रकार के लोग आनन्द की प्राप्ति करना चाहते हैं। उन्हें आनन्द की प्राप्ति का मार्ग पता चल गया है। इन्होंने इस बात को जान लिया होता है कि यदि किसी जीव को हम अपने सुख का दान देते हैं, तो उस जीव को सुख की प्राप्ति होती है, और सुख का दान करने वाले को आनन्द की प्राप्ति होती है। वे सुख का भोग करने के बजाय सुख का दान कर, उस दान से उत्पन्न होने वाले आनन्द को भोगना चाहते हैं। उन्हें इस बात का पता होता है कि यदि सुख को हम भोगने बैठेंगे, तो वह **कुछ ही समय में दु:ख बन जायेगा। सुख को भोगकर, कुछ समय के लिये उसका त्याग करना, यद्यपि सुख को सुख रखने में कारण बनता है, पर जीवन का क्या भरोसा। अगले ही क्षण क्या होगा, यह हम नहीं जानते। ऐसी स्थिति में अभी–अभी हमें जो सुख की प्राप्ति हुई है, उसे भोगने की अपेक्षा दान करने में ही बुद्धिमानी है। क्योंकि इससे मेरा सुख मुझे इसी क्षण आनन्द को भोगने का सौभाग्य प्रदान करेगा। अब मैं सुख का दान करता हुआ, उस सुख से लगा रहूँ, तो भी वह मेरा सुख, सुख ही रहने वाला है। खुद के भोगने के उपक्रम में जो सुख कुछ समय के बाद दु:ख में बदल जाता था, वैसा अब यहाँ नहीं होगा।**

योगी लोग धारणा, ध्यान, समाधि के द्वारा जो आनन्द के अनुभव का सौभाग्य प्राप्त करते हैं, वैसा सौभाग्य यदि गृहस्थ में रहकर भी प्राप्त करना हो, तो प्रथम सुख के स्वामी बनना सीख लो और जब सुख के स्वामी बन जायें, तो उसे भोगने की बजाय दान देने वाले बन जाएं। बस, जीवन में आनन्द ही आनन्द अनुभव होगा।

मनुष्य जीवन पाकर आनन्द का अनुभव करने का सौभाग्य न पाया, तो मानव जीवन व्यर्थ है।

–२४-बी, वीरनगर सोसायटी, नवावाडज रोड, अहमदाबाद-३८००१३

मनुष्यों को उचित है कि जो सब सुखों को प्राप्त करने, प्राणों को धारण कराने तथा माता के समान, पालन के हेतु जल हैं उनसे सब प्रकार पवित्र होके इन को शोधकर मनुष्यों को नित्य सेवन करने चाहियें, जिस से सुन्दर वर्ण रोग-रहित शरीर को सम्पादन कर निरन्तर प्रयत्न के साथ धर्म का अनुष्ठान कर पुरुषार्थ से आनन्द भोगना चाहिये।–**महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद भावार्थ-४.२।**

सौ वर्षों तक कर्म करते हुए जीने की इच्छा कर

-कन्हैयालाल आर्य

यजुर्वेद के ४०वें अध्याय का दूसरा मन्त्र है-

ओ३म् कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे।।

(इह) यहाँ इस संसार में (कर्माणि) सत्कर्मों को करता हुआ (शतं समा:) सौ वर्षों तक (जिजीविषेत्) जीने की इच्छा कर (एवम्) इस प्रकार (त्वयि) तुझ (नरे) मनुष्य में कर्म (न लिप्यते) नहीं लिप्त होता है (इत:) उससे (अन्यथा) दूसरा और कोई मार्ग (न) नहीं है।

इस मन्त्र में दो कर्तव्यों का विधान किया है-

१. कर्म करते हुए सौ वर्षों तक जीने की इच्छा कर।

२. कर्म करते हुए अपने आपको इसमें लिप्त मत कर।

इस मानव जीवन में हमने कर्मों को करते हुए ही जीना है। कर्म चार प्रकार के होते हैं-**१.** शुभ कर्म, **२.** अशुभ कर्म, **३.** शुभाशुभ-मिश्रित कर्म, **४.** निष्काम कर्म।

वेद कहता है ''शुभ कर्म करो।'' अशुभ कर्म मत करो अन्यथा बन्धन में पड़े रहोगे। शुभ कर्मों में भी यदि लिप्त हो जाओगे तो भी शुभ कर्मों का फल भोगने के लिए जन्म लेना ही पड़ेगा, जन्म लेना भी बन्धन है। शुभ कर्म भी साधन है, साध्य नहीं। इसलिए उसमें लिप्त नहीं होना। उनके फल की इच्छा मत करना। हम कर्म करने के लिए स्वतन्त्र हैं लेकिन फल पाने में परतन्त्र हैं। भगवान कृष्ण का गीता में यही मुख्य सन्देश है-अत: कर्म करते हुए सौ वर्षों तक जीने की इच्छा कर। जगत् में कोई ऐसी वस्तु दिखाई नहीं देती जो क्रिया रहित हो। संसार का नियम ही क्रिया है यह संसार **संसरति** निरंतर चल रहा है, जगत् है गति में है। सृष्टि का महान से महान कार्य करने वाला सूर्य प्रति क्षण गति में रहता है, पृथ्वी गतिमान है, चन्द्रमा गति में है, सृष्टि का प्रत्येक कण गतिमान है, प्रत्येक ग्रह उपग्रह गतिमान है। जगत् की छोटी से छोटी वस्तु कण है, जिसके भीतर गति हो रही है और जो स्वयं भी सूर्यमण्डल की तरह गति में है। जब कर्म का साम्राज्य जगत्व्यापी है तो मनुष्य उससे किस प्रकार बच सकता है, फिर मनुष्य के अकर्मण्य होने का क्या तात्पर्य? अत: वेद का यह मन्त्र हमें पल-पल कर्मनिष्ठ होने की प्रेरणा दे रहा है। यह मन्त्र जीवन की अन्तिम घड़ी तक कर्म करने की ओर इंगित कर रहा है।

इस मन्त्र में आगे कहा है ''सौ वर्षों तक जीने की इच्छा कर।'' केवल इच्छा ही मत कर बल्कि पुरुषार्थ भी कर। सौ वर्षों तक जीने के लिए तीन बातों का पालन करना आवश्यक है-

१. आहार-सात्विक आहार लिया जाना चाहिए।

२. निद्रा-आयु अनुसार उचित निद्रा भी लेनी चाहिए।

३. ब्रह्मचर्य-शरीर, मन और वाणी से कभी भी ब्रह्मचर्य विहीन नहीं होना चाहिए।

गृहस्थ में सन्तान तो उत्पन्न करें परन्तु जीवन को वासना के कीचड़ में न लिप्त करें। स्वामी दर्शनानन्द जी महाराज ने अपनी पुस्तक 'उपनिषद् प्रकाश' में इस मन्त्र की व्याख्या में एक दृष्टान्त इस प्रकार दिया है कि एक बार किसी धनी के पास एक मनुष्य पहुँचा और उससे नौकरी की माँग की। सेठ ने कहा-'क्या वेतन लोगे?' नौकरी के अभिलाषी ने कहा-मेरा वेतन यही है कि मुझे हर समय कार्य मिलता रहे, जब तुम कार्य नहीं दोगे तो मैं तुम्हें मार डालूँगा। धनी ने सोचा, यह तो बहुत अच्छा सेवक है, वेतन भी नहीं माँग रहा, सारे कार्य करने को उद्यत है। इस प्रकार सोचकर धनी व्यक्ति ने उसको नौकर रख लिया। नौकर की शर्त मान ली गई। नौकर बहुत शीघ्रकारी था। सेठ के मुँह से कार्य निकला नहीं कि नौकर उस कार्य को पूरा कर देता। कुछ ही दिनों में धनी के सब कार्य समाप्त हो गये। अब उसे चिन्ता हुई कि यह मुझे मार डालेगा। इस चिन्ता से धनी व्याकुल रहने लगा। खान-पान नीरस हो गया। एक दिन धनी के पास कोई बुद्धिमान मित्र आये। उन्होंने कहा इतनी धन-सम्पत्ति होते हुए भी इतने दुर्बल क्यों होते जा रहे हो? धनी ने सारी कथा कह सुनाई। उस मित्र ने कहा कि तुम इसे केवल अपने कार्यों में क्यों लगाते हो, पड़ौसी के, मोहल्ले वालों के, नगर के, सारी मानवता के कार्यों को अपना समझकर इसमें इसे लगाओ। ये असंख्य कार्य इससे नहीं निपटेंगे और तुम इसके हाथों से बचे भी रहोगे। यही अवस्था हमारे मन की है। जिस समय यह शुभ कर्मों से जरा सा अलग हुआ नहीं कि नाशकारी कामों में लग जायेगा, अत: मन को सदैव शुभ कर्मों में लगाए रखो। ऐसे करने से मुक्ति मिलेगी।

निष्काम कर्म ही मोक्ष देने वाले हैं, सकाम कर्म पुनर्जन्म की ओर ले जाते हैं। सांसारिक सुख को सामने रखकर जो कर्म किए जाते हैं उन्हें सकाम कर्म कहते हैं। अत: यदि बन्ध से मुक्त होना है, तो मृत्यु पर विजय प्राप्त करने की बजाए जन्म ही न हो, तो उसके लिए हमें निष्काम कर्म करने होंगे। जब कर्मों को कर्तव्य समझकर किया जाता है तो फल की इच्छा नहीं होती, सन्तोष बना रहता है। कर्म का त्याग नहीं करना है। पूरे जीवन भर करते जाना है और पूरे जीवन भर शुभ कर्मों के फल की इच्छा भी नहीं करनी है, यह परम सन्तोष है। शान्ति एवं आनन्द

प्रदान करने वाला है। ऐसा कर्म बन्धन नहीं होता जिस प्रकार कमल कीचड़ में रहता हुआ भी अपने आप को कीचड़ में लिप्त नहीं करता, उसी प्रकार हमें भी कर्मों में लिप्त नहीं होना है, तभी हम सभी कार्य ईश्वर आज्ञा मानकर करेंगे और हमें फल की इच्छा भी नहीं रहेगी। फल की इच्छा को सामने रखकर, कर्म करने की इच्छा की पूर्ति होने पर हर्ष, सुख और न पूरी होने पर शोक व अशान्ति पैदा होती है। कर्म करने के अतिरिक्त कोई दूसरा मार्ग नहीं है। इस पर जीव सोचने लगा कि इतना लम्बा जीवन जीकर क्या करूँगा। जीवन जितना लम्बा होगा उतने ही अधिक पाप होंगे। कर्म करना भी तो भय से रहित नहीं है। कर्म का फल भोगना पड़ेगा। फल भोगने के लिए शरीर धारण करना पड़ेगा, तो मानव झंझटों में ही फंसा रहेगा, ऐसा सोचकर जीव उदास हो जाता है तभी तो कहा है कि कर्म तो कर और फल की इच्छा मत कर। इस प्रकार की जब हमारी सोच बन जायेगी, तो हमें कर्म लिप्त न कर सकेंगे। जो लोग दूसरों की भलाई के लिए कर्म करते हैं, वे सदा सुखी रहते हैं। इसलिये परोपकार की भावना, जो शुभ है, सदा मन में रखकर संसार के उपकार के लिए कटिबद्ध रहना चाहिए। जब तक प्राण है कभी इस परोपकार के कर्मों से अलग नहीं होना चाहिए। मनुष्य जीवन बहुत ही मूल्यवान् है, इसे व्यर्थ में नहीं बिताना चाहिए। जो लोग ईश्वर आज्ञा की उपेक्षा कर व्यर्थ में अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं, वे मूर्ख हैं। जो स्वार्थ के बिना निर्लिप्त भाव से संसार के उपकार में लगे रहते हैं उनके कर्म बन्धन का कारण नहीं बनते। अतः शुभ-अशुभ कर्मों पर विचार करके सौ वर्षों तक पुरुषार्थ करते हुए जीवन को व्यतीत करें। जीवन की सार्थकता इसी में है। यही जीवन का सार है।

-०४/४५, शिवाजी नगर, गुड़गांव।
दूरभाष-९९११११९७०७३

ई-मेल द्वारा परोपकारी निःशुल्क

परोपकारी के पाठकों को प्रसन्नता होगी कि अब परोपकारी ई-मेल द्वारा भी भेजी जा रही है। परोपकारिणी सभा की वेब-साइट पर तो परोपकारी पहले से ही निःशुल्क उपलब्ध है। विश्व में कहीं भी कोई भी इसे वेब-साइट पर पढ़ सकता है। इसके साथ ही अब यह सुविधा भी उपलब्ध कराई गई है कि परोपकारी आपके पास ई-मेल द्वारा पहुँच जाये। इससे यह पत्रिका शीघ्र व अधिक सुन्दर रूप में आप तक पहुँच सकेगी। आप जहां भी रहें, कभी भी पढ़ना चाहें, यह आपके पास रहेगी। डाक की अव्यवस्था से छुटकारा मिल सकेगा। यह आपको नियमित मिलती रहेगी। इससे रासायनिक रंगों व कागज का उपयोग भी कम होगा, खर्च भी घटेगा। अतः पाठकों से अनुरोध है कि **कृपया अपना ई-मेल पता सभा को ई-मेल से भिजवा देवें।** आप जिन इष्ट-मित्रों, परिजनों व संस्थाओं को परोपकारी भिजवाना चाहते हैं, उनके ई-मेल पते भी भिजवा देवें, उन्हें भी यह निःशुल्क भेज दी जायेगी। ई-मेल-psabhaa@gmail.com

-व्यवस्थापक

नये संस्करण बिक्री हेतु उपलब्ध

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

पुस्तक का नाम	**मूल्य**
१. दयानन्द ग्रन्थमाला-३ भागों का १ सैट	५५०.००
२. ऋग्वेद भाष्य भाग-५	२५०.००
३. यजुर्वेद भाष्य भाग-२	३५०.००
४. यजुर्वेद भाष्य भाग-३	२५०.००

उपरोक्त पुस्तकें नई छपकर बिक्री हेतु आ गई हैं, जो पाठकगण पुस्तकें मंगाना चाहें, तो कृपया वैदिक पुस्तकालय, केसरगंज, अजमेर से सम्पर्क करें।

-व्यवस्थापक, दूरभाष: ०१४५-२४६०१२०

पाठकों के विचार

अशान्त उत्तरपूर्वांचल प्रत्यक्ष दर्शन–देश के उत्तर पूर्वांचल के सात राज्यों में चर्च के प्रकोप तथा राष्ट्र विरोधी गतिविधियों के बारे में अनेक वर्षों से सुनने तथा पढ़ने को मिलता था। विषम स्थिति को प्रत्यक्ष देखने की इच्छा लम्बे समय से थी। भारत विकास परिषद् की राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक फरवरी २०१३ में गोहाटी में होने से मेरी इच्छा पूरी हुई। अहमदाबाद हवाई अड्डे से ४.३० घंटे में गोहाटी पहुंचा जाता है। वहाँ हमारे रहने तथा बैठक की व्यवस्था डान बोस्को इन्स्टीट्यूट में थी। ब्रह्मपुत्र के किनारे अनेक कई मंजिले भवनों में यह संस्थान चलता है। ईसाईयत के प्रचार का बहुत बड़ा केन्द्र है। पूरे उत्तर पूर्वांचल से बालक–बालिकाएँ पहले पढ़ने और फिर धर्म परिवर्तन के लिये यहाँ आते हैं। शहर में गरीबी और आतंक दोनों का दर्शन होता है। भीड़–भाड़ वाले स्थानों पर पुलिस के साथ सेना के जवान भी राइफल के साथ तैनात थे। अंधेरा जल्दी हो जाता है। अंधेरा होते–होते अपने घर या होटल पहुँच जाने की सलाह स्थानीय मित्रों ने दी।

दयानन्द सेवाश्रम संघ नागालैण्ड के कार्यकर्ता श्री शिरोमणी शास्त्री से पहले से परिचय था। उन्होंने सवेरे जनशताब्दी से गोहाटी से दिमापुर पहुँचने को कहा। रेलवे स्टेशन पर भाई संतोष लेने आये थे। दिमापुर में राष्ट्रीय राजमार्ग पर डी.वी.एन. विद्यालय तथा छात्रावास है। रास्ते में उन्होंने सब्जी बाजार, सुपर बाजार, सुअर बाजार तीनों नामों से संबोधित एक बाजार बताया। बाजार में आलू, गोबी, टमाटर के साथ जिन्दा मेढ़क, मछलियाँ, गौ मांस के टुकड़े पैक बंद थे। अनेक तरह की सूखी मछलियाँ और गिलहरी जैसे जीव सूखे हुए डिब्बों में तथा टंगे हुए रखे थे। सबसे ज्यादा आश्चर्य तो कुछ पिल्ले देखकर हुआ। नागा इन्हें भी खा जाते हैं।

यहाँ से डी.वी.एन. (दयानन्द विद्या निकेतन) विद्यालय पहुँचे। छोटा सा ४–५ कमरों का विद्यालय, दो कमरों का छात्रावास, कार्यकर्ता आवास, कार्यालय, भोजनशाला, यज्ञशाला है। यज्ञशाला है, पर यज्ञ नहीं कर सकते, क्योंकि पास के जुड़े हुए चर्च से लोग आकर बंद करा देते हैं। कहना न मानने का अर्थ है वे कभी भी आकर आग लगा देंगे, तबाह कर देंगे। पहले आग लगाई जा चुकी है। दोपहर भोजन के पश्चात् छात्रावास के छोटे बालकों से मिलकर पास के केन्द्र देखने गए। धनसेरी नदी के किनारे, चारों और हरियाली, एक आश्रम, एक ब्रह्मचारी, गुरुकुल आमसेना के दस बालक गुरुकुल कांगड़ी की चाय से स्वागत, एम.डी.एच के महाशय धर्मपाल के सहयोग से विद्यालय का निर्माण हो रहा है। दिल्ली से सी.पी.डब्ल्यु.डी. के सेवानिवृत्त इंजीनियर विद्यालय निर्माण हेतु आये हुए थे। बच्चों ने गायत्री मन्त्र और वैदिक प्रार्थना मन्त्र सुनाये। उस जंगल में सबने मिलकर वन्दे मातरम, कृण्वन्तो विश्वमार्यम्, महर्षि दयानन्द और भारत माता की जय का उद्घोष किया। नागालैण्ड में यह दुस्साहस पूर्ण खतरनाक काम हम इसलिये कर सके कि यह नागालैण्ड की हिन्दू जनजाति दिमासा का क्षेत्र था। दिमासा अपने आपको भीम और हिडीम्बा की सन्तान मानते हैं तथा ईसाई हो चुके नागाओं से इनकी लड़ाई है। यहाँ से हम पास के गांव में श्री गंगा ठपलैसा के घर गये। वे तथा उनका बेटा खेत में काम कर रहे थे। गंगा ठपलैसा पहले बामनीया आये थे, तब से परिचय था। ये पहले भूमिगत दिमासाओं के कमाण्डर थे तथा उनके खेत में बंकर बने हुए थे। अब इन्होंने १०० बीघा जमीन दयानन्द सेवाश्रम संघ को दान दी है। पास ही उनके घर गये। बांस के घर में यज्ञकुण्ड बना हुआ था। धर्माचार्य युवा संतोष आर्य ने बताया कि दिमापुर और आसपास के क्षेत्र में भी माह में एक दो यज्ञ तो करवा ही देता हूं। गंगा ठपलैसा के परिवार ने हस्त निर्मित हरे अंगोछे प्रदान कर आत्मीयता दर्शायी।

अंधेरा हो जाने से रास्ते में खटखटी प्रकल्प देखे बिना दिमापुर आ गये। शहर में अनेक छोटे–बड़े गिरजाघर दिखे। शाम के ६ बजे थे, पर बाजार बन्द हो रहा था। सड़कों पर महिलाएं इक्की–दुक्की ही थीं। गाड़ी के ड्राईवर तथा साथ के कार्यकर्ताओं में भी भय था। ड्राईवर से नागा एक बार गाड़ी की चाबी छीनकर गाड़ी लेकर भाग चुके थे, जो अब तक नहीं मिली। इसलिये ड्राईवर गाड़ी के पास सड़क पर नहीं रहता था। गाड़ी बन्द कर चाबी लेकर पार्टी के साथ चलता था। डॉ. शिरोमणी शास्त्री ने बताया कि यहाँ चर्च का बड़ा आतंक है। सरकार की तरह वे भी टेक्स लेते हैं। उनकी अनुमति से ही ग्रामीण क्षेत्रों में वाहन चलते हैं। विद्यालय निर्माण के लिये खरीदे सीमेंट का भुगतान करने गये तो बिल में व्यापारी ने टेक्स लिख करके कुछ राशि लिखी तो इन्जीनियर साहब बोले कि वेट तो उत्पादन स्थान पर लेते हैं, दुबारा क्यों? तो संतोष आर्य ने बताया यह आप नहीं समझोगे, यह नागालैण्ड चर्च का टैक्स है। व्यापारी मूल रूप से अलवर राजस्थान के रहने वाले अग्रवाल थे। अलवर में तथा दीमापुर में भी दुर्गा मन्दिर के लिए दिल खोलकर दान–पुण्य करते हैं, पर ईसाइयत रोकने के लिये किये जाने वाले सेवा कार्यों में सहयोग नाम मात्र का है। सन्तोष आर्य ने बताया यहाँ दिमापुर समेत पूरे नागालैण्ड में दिवाली के समय से ही क्रिसमस की तैयारी शुरु हो जाती है। किराणा व्यापारी से लेकर बड़े व्यापारी तक सभी को २५ हजार से लाख–दो लाख तक चन्दा क्रिसमस समारोह के लिये देना होता है तथा क्रिसमस की प्रार्थना में भी हर परिवार से एक आदमी

को आना होता है। इतनी ही नहीं इसे वहाँ बनाये भोजन प्रसाद को भी लेना होता है।

दीमापुर से वापस आसाम की सीमा में बोकाजान आश्रम गये। यह कार्बीलोगे जनजाति का क्षेत्र है। यहाँ भी राजमार्ग पर लगभग ४० वर्ष पूर्व स्थापित दयानन्द आश्रम है। श्री गीता वोरा (स्थानीय सज्जन) सचिव हैं। कई बीघा क्षेत्र में फैले परिसर में प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च माध्यमिक विद्यालय है। लड़के, लड़कियों का छात्रावास, अतिथि गृह है। मन बड़ा प्रसन्न हुआ, पर पता चला कि वर्षों पूर्व यहाँ भी अपने दो कार्यकर्ताओं को स्थानीय ईसाई लोगों ने काट डाला था। महीनों तक असम राइफल्स पड़ी रही, फिर जाकर विद्यालय शुरु हो सका।

यहाँ से अरुणाचल जाना था, पर चुनाव होने से वाहन ने मिलने तथा बर्फबारी के समाचारों से तेजपुर से ही वापस लौटना पड़ा अरुणाचल में प्रवेश हेतु भारतीयों को भी परमिट लेना पड़ता है।

तेजपुर से गोवाहाटी होते हुए मेघालय की राजधानी शिलांग पहुंचे। नगर प्रवेश द्वार पर जल विद्युत संयंत्र **बड़ा पानी** है। जिससे सारे मेघालय को पर्याप्त विद्युत् आपूर्ति होती है, यहाँ कभी भी पावर कट नहीं होता है। प्राकृतिक रूप से अत्यन्त सुन्दर प्रदेश है। मुख्य जनजाति खासी ९९ प्रतिशत ईसाई बन चुकी है। शहर में प्रवेश करते हुए मांस के लोथड़े टंगे हुए थे। एक दुकान पर कटा हुआ बछड़ा पड़ा था। ग्राहकों की मांग के अनुसार उसका अंग विशेष काट-काटकर बेचा जा रहा था। यहाँ विवेकानन्द केन्द्र, भारत सेवा संघ, आर्य कन्या विद्यालय तथा आर्यसमाज भी हैं। ये खासी तथा गारा जनजाति जब हिन्दू थी, तब गौ मांस नहीं खाती थी लेकिन अब यह इनका प्रिय भोजन है। राजस्थानी, बंगाली बरसों से यहाँ हैं। अब बिहारी भी हैं। सीकर राजस्थान निवासी होटल मालिक ने बताया कि दस वर्षों से यहाँ शान्ति हैं। पहले नागालैण्ड की तरह हमें भी स्थानीय चर्च को वार्षिक पैसा देना पड़ता था। नहीं दो तो जला देते या मार देते थे। अब यहाँ खूब कोयला निकलता है, सीमेन्ट फैक्ट्रियाँ हैं। पढ़-लिख गये हैं। टूरिस्ट भी खूब आते हैं। अत: हिन्दी भी सीख गये हैं।

राजधानी शिलांग से चेरापूंजी गये। वर्षा अब कम हो गई है। पानी के झरने सूख गये हैं। अत: पीने का शुद्ध पानी भी उपलब्ध नहीं है। यह रामकृष्ण मिशन का विद्यालय सन् ५२ से चल रहा है। आतंक के डर से युवा संन्यासी विस्तार से कुछ बता नहीं पा रहे थे। हिन्दी या संस्कृत का नाम नहीं। कोई हिन्दू संस्कार प्रदान करना भी संभव नहीं था। सिर्फ सेवा करके ईसाईयत की आंधी को रोकने का प्रयास कर रहे थे। लौटते समय **''मोसीनराम''** नामक स्थान देखा। पिछली सुनामी के बाद आये वायुदाब में परिवर्तन के बाद अब यहाँ सबसे अधिक वर्षा होती है। यहाँ पर्वत की गुफा में एक स्वयंभू शिवलिंग है। ऊपर पहाड़ से टपकता पानी अभिषेक करता है। यहां पूजा करना व पानी चढ़ाना मना है।

मैं जब शिवलिंग के पास था, तभी वहाँ गुजरात के वरिष्ठ आई.ए.एस. अधिकारी के साथ मेघालय सरकार का प्रोटोकॉल अधिकारी तथा गनमैन आये। मैंने जब पूजा न करने देने का कारण पूछा तो वे टाल गये। हमारे जैसी **सर्वधर्म समभाव** की भावना औरों में कहाँ?

मणिपुर, त्रिपुरा तो इतने उपद्रवग्रस्त थे, कि वहाँ तो जाना ही खतरों से खेलना था। समयाभाव से और प्रान्तों में न जा सका। पर इतना तो पता चल ही गया कि १०० वर्ष पूर्व डान बोस्को नामक इंग्लैण्ड से आये पादरी ने अपने देशी और विदेशी साथियों की मदद से शिक्षा और स्वास्थ्य की मदद कर पूर उत्तर पूर्वांचल की जनजातियों को बहुत बड़ी संख्या में ईसाई बना दिया है। बचे-खुचे का धर्म खरीदने का इनका कुचक्र अभी चालू है। वहाँ इन्हीं की सरकार चलती है। सेना के बल पर भी अभी ये भारत में हैं। इन्हें भारत की मूल धारा से जोड़ने के लिये पुराने जमाने से अनेक कार्यकर्ता वहाँ गये हैं। अब साधन और संसाधन बड़ी संख्या में जुटाकर हजारों कार्यकर्ता वहाँ पहुंचाने की जरूरत है। कृण्वन्तो विश्वमार्यम् तभी होगा जब हम कृण्वन्तो भारतमार्यम् कर पावेंगे। नागालैण्ड डी.वी.एन. विद्यालय में मैरी क्रिसमस लिखा देखकर मैंने जब सन्तोष आर्य की ओर प्रश्न की निगाह से देखा, तो वह बोले की क्या करें प्रिंसीपल इसाई है। इसलिये आवश्यकता है कि बड़ी संख्या में वानप्रस्थी, संन्यासी और सेवाभावी युवा दम्पत्ति इस क्षेत्र में पहुंचे और ''डान बोस्को'' की विष बेल को उसी के हथियारों शिक्षा और स्वास्थ्य सेवा से काटें। संसाधन भी बड़ी मात्रा में करोड़ों की संख्या में जुटाने की जरूरत है।

-डॉ. युधिष्ठिर त्रिवेदी, वरिष्ठ शिशु रोग विशेषज्ञ
बांसवाड़ा, चलभाष-०९४१४१०१२९५

मनुष्यों को सब जगत् के उत्पन्न करने वाले निराकार, सर्वव्यापी, सर्वशक्तिमान्, सच्चिदानन्दादि लक्षणयुक्त परमेश्वर, धार्मिक सभापति और प्रजाजन समूह ही का सत्कार करना चाहिये, उनसे भिन्न और किसी का नहीं। विद्वान् मनुष्यों को योग्य है कि प्रजा-पुरुषों के सुख के लिये इस परमेश्वर की स्तुतिप्रार्थनोपासना और श्रेष्ठ सभापति तथा धार्मिक प्रजाजन के सत्कार का उपदेश नित्य करें, जिससे सब मनुष्य उनकी आज्ञा के अनुकूल सदा वर्त्तते रहें और जैसे प्राण में सब जीवों की प्रीति होती है, वैसे पूर्वोक्त परमेश्वर आदि में भी अत्यन्त प्रेम करें।- **महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद भावार्थ-४.२५।**

पाठकों की प्रतिक्रिया

१. 'परोपकारी' का जनवरी (प्रथम) २०१३ अंक पढ़ा। बेहद अच्छा लगा। पं. ओमप्रकाश वर्मा को सुनने का एक बार अवसर मिला, यमुनानगर आर्यसमाज में। वे बड़े ही महान थे। उन्हें आर्यसमाज के सम्बन्ध में बड़े ही संस्मरण याद थे। उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन आर्यसमाज की सेवा में लगा दिया। उनके जैसे लोग अब आर्यसमाज में कहाँ है?

पं. रामचन्द्र देहलवी का नाम तो मैंने बहुत सुना है। वे शास्त्रार्थ के महारथी थे। लेकिन मैं उनके बारे में ज्यादा नहीं जानता। उनके बारे में विस्तृत जानकारी वाला लेख छापने की कृपा करें। राजेन्द्र जिज्ञासु जी ने तो अपना जीवन ही आर्यसमाज की सेवा में लगा दिया। आशा है भविष्य में अन्य अच्छे लेख पढ़ने को मिलेंगे। आपका धन्यवाद। **-अजय कुमार गोयल, द्वारा स्व. श्री सुमेरचन्द्र, मौ. पठानावाला, नियम गुरुद्वारा, नारायणगढ़, जिला-अम्बाला-१३४२०३, ईमेल- aryagoel69@gmail.com, चलभाष-९८१३५५०२८९**

२. परोपकारी फरवरी प्रथम २०१३ का सम्पादकीय पढ़ा। सोचता ही रह गया। उड़ती-उड़ती खबरों से जानकारी मिली थी कि स्वामी विवेकानन्द मांसाहारी है। पर सम्पादकीय का विस्तृत विचार से सौ प्रतिशत की पूर्ति हो गयी। स्वामी और मांसाहारी? यह अघोरी की श्रेणी का खाना है। ऐसे स्वामी का नाम विदेश में धर्म, संस्कृति और सभ्यता के प्रचार में भारत का नाम ऊँचा किया है, पढ़ने को मिलता है। क्या विदेशियों को यह जानकारी नहीं थी कि भारत के स्वामी, संन्यासी माँस भक्षण नहीं करते हैं। शायद जानते हुए भी उन्हें स्वीकारा होगा। खान-पान की पाबन्दी नहीं खुलम-खुल्ला खाओ-पियो और धर्म प्रचार करो। उन्हें तो **रजनीश** की श्रेणी में गिनना चाहिये। उस समय के भारतीय विद्वान् उन्हें सावधान नहीं करवा सकते थे। शायद करवाया भी होगा तो-'हाथी चले बाजार, कुत्ता भौंके हज़ार' की बात आ जाती है। गेरुए रंगीन वस्त्र का भी ख्याल नहीं किया। भारत को ले डूबा। स्वामी शब्द उनके नाम से हटा देना चाहिए। उनके विवेक से किसी को लाभ नहीं हुआ होगा। पाप के रास्ते पर चलकर कल्याण चाहना उलटी बात हो जाती है, स्वामी का विवेक उन्हीं को आनन्द दिया होगा या नहीं, वे ही जानें। लेकिन भारत का नाम बदनाम ही हुआ है।

-सोनालाल नेमधारी, कारोलिन, बेल-प्रट, मोरिशस, दूरभाष-२३०-४१९२६६१

३. सम्माननीय श्री सत्यजित् आचार्य जी! सादर नमस्ते। परोपकारी पत्रिका में आपके द्वारा किये गये जिज्ञासाओं के समाधानों एवं 'चतुर्वेदविद्: आमने-सामने' स्तम्भ में पं. उपेन्द्रराव द्वारा वेद-मन्त्रों पर किये गये आक्षेपों की समीक्षा की शैली बहुत ही तर्कपूर्ण, प्रभावी एवं तलस्पर्शी होती है। उक्त समाधानों व समीक्षा का मैं बहुत ही मनोयोग से अवलोकन करता हूँ।

पं. उपेन्द्रराव से मेरा अच्छा परिचय है। वेदों की अपौरुषेयता पर मैंने उनके घर पर काफी देर तक चर्चा की थी। उसी सन्दर्भ में उनसे कुछ प्रश्न भी किये थे। उनके उत्तर वे ठीक से नहीं दे सके। उनकी १०० प्रश्नों वाली पुस्तिका भी मेरे पास है। पूज्या आचार्या सूर्यादेवी चतुर्वेदा ने उनके सभी प्रश्नों के सटीक उत्तर दिये हैं। वे शास्त्रीय प्रमाणों से युक्त हैं। आपके द्वारा भी उनके आरोपों की समीक्षा सरल-सुगम एवं तर्कपूर्ण शैली में 'परोपकारी' के पाठकों के लिये लाभदायक व सराहनीय है।-**पुरुषोत्तम आर्य, ३२२-उद्गीथ भवन, रायलसिटी कॉलोनी, विदिशा ४६४००१ म.प्र. चलभाष-९८९३०७८४२५**

४. वर्ष २०१२ के पिछले महीनों में मेरे तीन लेख 'परोपकारी' में प्रकाशित हुए हैं, इसके लिए आपका धन्यवाद।

'परोपकारी' मे प्रकाशित सम्पादकीय बहुत ही रोचक-प्रभावपूर्ण एवं सामयिक होते हैं। पत्रिका में चयनित सभी लेख खोजपूर्ण-उत्साहवर्द्धक एवं प्रेरणाप्रद होते हैं। 'जिज्ञासा-समाधान' का स्तम्भ बहुत ही ज्ञानवर्द्धक एवं वैदिक सिद्धान्तों को पुष्ट करने वाला है। 'चतुर्वेदविद्: आमने-सामने' वाला स्तम्भ पं. उपेन्द्रराव द्वारा फैलाई गई भ्रान्तियों का ध्वस्त करने वाला तथा जिज्ञासु जी द्वारा प्रस्तुत 'कुछ तड़प-कुछ झड़प' वाला स्तम्भ-आर्यसमाज के इतिहास को जीवन्त करने वाला और नवयुवकों में वैदिक चेतना का संचार करने वाला है। इन सभी के प्रकाशन के लिये आप धन्यवाद के पात्र हैं। **-पुरुषोत्तम आर्य, ३२२-उद्गीथ भवन, रायलसिटी कॉलोनी, विदिशा ४६४००१ म.प्र. चलभाष-९८९३०७८४२५**

५. श्री धर्मवीर जी सम्पादक (परोपकारी पाक्षिक पत्रिका)। नमस्कार। मैं आपकी पुस्तक का नियमित पाठक हूँ, पुस्तक में कुछ हिन्दुवादी विचारों से मैं सहमत भी हूँ, परन्तु हिन्दु धर्म किसी भी विचार की आलोचना नहीं करता, परन्तु आपके विचार आलोचनात्मक हैं। और आपके विचारों से मेरे विचार किसी भी प्रकार से मेल नहीं खाते। फरवरी माह की प्रथम पत्रिका में सम्पादकीय में आपने स्वामी विवेकानन्द जी के बारे में अनर्गल कई प्रकार की बातें रखी हैं, जो निराधार तथा तथ्य हीन है। स्वामी जी का १५०वाँ जन्मवर्ष चल रहा है, स्वामी जी युवाओं के प्रेरणास्रोत हैं, ऐसे में आलोचना करना अपनी साख को कम करना ही है। सतयुग में भगवान राम की भी आलोचना एक धोबी ने की थी। ऐसे में आपको एक धोबी के रूप में ही देखा जायेगा। अत: आपसे मेरा सुझाव या मेरी राय है कि ऐसी बातों का प्रयोग कर समाज के विघटन का प्रयास न करें। इस

पुस्तक की सदस्यता समाप्त कर दी जाये। आगे से निम्नलिखित पते पर यह पुस्तक न भेजी जाये। -**नरेश कुमार, ८०६१-श्री वाचनालय सेवा भारती समिति, संघ कार्यालय 'समिधा', जवाहरसिंह नगर, भरतपुर, राजस्थान-३२१००१**
दूरभाष-०५६४४-२२३११८

६. परोपकारी पत्रिका को पढ़कर और यह जानकर बहुत खुशी हुई कि ध्यान पद्धति का सरल संशोधित प्रारूप आप लोग ध्यान प्रशिक्षक आर्य/हिन्दू जनों को पहुँचाने का कार्य करेंगे, यह कार्य अति सराहनीय है, और सभा इसके लिये धन्यवाद की पात्र है।

मैं और मेरे परिवार अपने स्वयं के अनुभवों से कह सकते हैं कि ध्यान योग पद्धति का प्रारूप शक्ति और शान्ति दिलाने वाली प्रक्रिया है, और इस पद्धति को दिन के प्रारम्भ और अन्त में करने से बहुत आध्यात्मिक लाभ मिला है, जैसे कि मन में स्थिरता और इन्द्रियों पर ज्यादा नियन्त्रण।

इस पद्धति को और लाभदायक बनाने के लिये कुछ सुझाव-१. स्थिर आसन-मन में शान्ति का भाव लाने का आदेश सभी साधकों को दिया गया है। शान्ति भाव लाना अधिकतर साधारण नये साधकों के लिये बहुत कठिन होगा, इसलिये पहले साधकों को अपने मन को केन्द्रित करने का आदेश देना चाहिये, साथ ही प्रणव जप से जुड़े हुए मुख्य गुण ''**सर्वरक्षक**'' शब्द जिसमें ईश्वर के सभी गुण समाहित हैं उस पर मनन करना चाहिये। मन स्थिर हो जाने पर आसन और अधिक सुखकर और स्थिर होगा। **२. ओ३म् व गायत्री मन्त्र**-यह प्रक्रिया उत्तम है। **३. संकल्प**-बहुत ही स्पष्ट और सारगर्भित है। **४. दीर्घ श्वसन**-नासिका से दीर्घ गहरा लयबद्ध श्वास लेते हुए ''ओ३म् सर्वरक्षक'' शब्द का मानसिक उच्चारण किया जा सकता है। ऐसे मानसिक जप करने से दीर्घ श्वसन करना और सार्थक होगा और मन चंचलता वश नहीं भटकेगा। **५. बाह्य प्राणायाम**-इस प्राणायाम को करते समय मन में ''ओ३म् सर्वरक्षक'' का जप करना चाहिये। ऐसे करने से मन को एक चिन्तन करने योग्य ईश्वरीय गुण मिलेगा। महाव्यावृत्तियाँ-ओ३म् भूः, ओ३म् भुवः, ओ३म् स्वः-संध्या मन्त्रों में इसलिये प्रयोग किया जाता है। एक गुण पर ध्यान करना नये साधकों के लिये आसान होगा। **६. प्रत्याहार**-मन को निराकार, सर्वव्यापक परमेश्वर में लगाये रखना ताकि इन्द्रिय विषयों में न प्रवृत्त हो। अगर ऊपर दिये गये केवल ''ओ३म् सर्वरक्षक'' पवित्र शब्द पर साधक मनन करते रहेंगे तो अभ्यास और सरल और सुखदायक होगा। निराकार, शून्य वस्तु पर केवल मनन करना अति कठिन होता है और जब शुरु में साधक का सम्बन्ध ईश्वर के साथ शिथिल होता है, उस पर मन साधना लगभग असम्भव होता है। **७. प्रणव जप**-अभ्यास उत्तम है। **८. धारणा+ध्यान, ओ३म्+अर्थ चिन्तन**-साधकों को केवल एक ही स्थान-नासिकाओं के अग्र भाग पर अपने मन को केन्द्रित करना चाहिये। ऐसे करने से साधकों के अभ्यासों में समानता आयेगी और काफी अनुभवों से पता चलता है कि इस स्थान पर मनन करने से अच्छी तरह से धारणा हो पाती है, और मन जल्दी एकाग्रचित्त हो जाता है। एकाग्रचित्त मन ही केवल ध्यान स्थिति में जा सकता है। ध्यान जैसे ऊपर लिखा गया है उसी ''बीज शब्द'' पर होना चाहिये जो धारा के तरह पद्धति की शुरु से अन्त तक प्रयोग किया जाता है-अगर साधक को ''ओ३म् सर्वरक्षक'' शब्द का मानसिक उच्चारण करने की आदत हो गयी है तो यह स्वाभाविक है कि ध्यान करते समय साधक इसी विचार को अधिक गम्भीरता व प्रेम-भक्ति से कर पायेगा और उसी शब्द में निमग्न हो जायेगा। अगर यह मूल शब्द ''ओ३म् सर्वरक्षक'' पहली बार ध्यान के समय प्रस्तुत किया जायेगा तब सम्भवतः प्रेम/श्रद्धा का भाव बहुत कम होगा। **९. समर्पण धन्यवाद**-यह प्रक्रिया अति उत्तम है। साधकों को यह निर्देश भी देना चाहिये कि ध्यान की पवित्र स्थिति को चलते-फिरते, दैनिक कार्यों को करते समय भी रखना चाहिये। ''ओ३म् सर्वरक्षक'' मन ही मन नासिकाओं के अग्र भाग पर ध्यान करने से मन स्थिर और पवित्र रहेगा और साधक अपने सब कार्यों को सुन्दर, सफल और कुशल ढंग से पूरा कर पायेगा। वह हमेशा अच्छे निर्णय भी ले पायेगा क्योंकि ईश्वर और आत्मा की आन्तरिक सलाह हमेशा उस विवेकी सजग साधक को सुनायी देगी। आज असुरक्षा के भाव से जन सामान्य को बहुत पीड़ा है, यह दुःख ''ओ३म् सर्वरक्षक'' बीज मन्त्र को नियमित रूप से दोहराने से और अच्छे कार्य करने से दूर हो सकता है।

जहाँ जन सामान्य तक ध्यान योग पद्धति को पहुँचाने की बात होती है, ध्यान योग की मूल आध्यात्मिक बातें जैसे की ईश्वर क्या है, इनको क्यों मानना चाहिये? इत्यादि आस्तिक विचारों को प्रमाण सहित प्रस्तुत करना चाहिये। आधुनिक भारत की धर्मनिरपेक्ष संस्कृति की वजह से ईश्वर के गुण, सत्ता और इस सृष्टि को रचने के प्रयोजन के बारे में बहुत कम बातें की जाती है। न केवल भारत के, लेकिन विश्व के आधुनिक वैज्ञानिक माहौल को देखकर यह बहुत ही आवश्यक प्रतीत होता है कि जब तक परोपकारिणी सभा ध्यान योग पद्धति विज्ञान, तर्क, प्रमाण, अनुमान-प्रमाण के साथ नहीं सिखायेगी इसका प्रभाव कम और अल्पकालिक होगा।

विज्ञान, वैज्ञानिक अविष्कार, और एक सुचारू समृद्ध समाज का ध्यान से बहुत गहरा सम्बन्ध होता है। उदाहरण के तौर पर अंग्रेजी साम्राज्य की स्थापना, विकास और आधिपत्य पूरे विश्व में क्यों और कैसे इतने विस्तृत ढंग से फैल गया था। क्योंकि अंग्रेजी सरकार ने ध्यान और विज्ञान का ओजपूर्ण सम्बन्ध को महत्त्व दिया था। हालांकि अंग्रेजी सरकार की ध्यान पद्धति इसाई मत पर आधारित/प्रभावित रही। इस साम्राज्य के

मुख्य पात्रों ने अपने इन्द्रियों पर काफी हद तक जीत प्राप्त करके, विज्ञान के रास्ते पकड़कर पूरे विश्व को अपना बना दिया और उसके साथ-साथ ईसाइयत, अंग्रेजी भाषा, सभ्यता, वेष-भूषा, खान-पान और संस्कृति की अन्य अवैज्ञानिक, असंयमी संस्कृतियों पर भारी प्रभाव डाला।

वैसे तीन-चार दशकों से चीन और जापान देशों का प्रभाव बढ़ता दिख रहा है। विशेषतर जापान पाश्चात्य, विकसित देशों की श्रेणी में इसलिए गिना जाता है, क्योंकि उन्हें जेन बुद्धिस्म (ध्यान पद्धति) और वैज्ञानिक कुशलता की ओर ले गया है। इन देशों के अनुशासन को देखकर पाश्चात्य, विकसित देशों को यह विश्वास हो गया है कि जापान भी एक विकसित, अनुशासित देश है।

भारत और भारतीयों के भौतिक-आध्यात्मिक विकास हेतु ध्यान को योग दर्शन के सूत्र के सहयोग से सिखाना आवश्यक है। सांख्य दर्शन की मूल तत्त्व ज्ञान और गूढ़ वैदिक वैज्ञानिक बातें हर मनुष्य को छूता है, यह ज्ञान जन सामान्य को भी समझाना चाहिये। महत्वपूर्ण बातें जैसे प्रकृति क्या है, प्रकृति पुरुष की कैसे सहायक होती है? ध्यान के माध्यम से, पुरुष प्रकृति का भोग कैसे सबसे उत्तम ढंग से कर सकता है, और प्रकृति को पुरुष के लिये क्यों मुक्ति का साधन माना गया है? इन बातों की भी चर्चा होनी चाहिये।

विज्ञान और ध्यान योग की बातों को और सटीक बनाने के लिये, विज्ञान-ध्यान के द्वारा किये गये रुचिपूर्ण आविष्कारों के बारे में बताना चाहिये और नये आविष्कारों पर चर्चा होनी चाहिये। ऐसे करने से जन-सामान्य का ज्ञान और भौतिक विकास होगा और उसके प्रभाव से वैदिक ध्यान-योग पद्धति को करने में बहुत रुचि होगी। सोलह संस्कार और अन्य जीवन सम्बन्धित बातें यहाँ भी जोड़ी जा सकती है, ताकि लोग समझ सकें कि यह पद्धति न केवल आधुनिक है, लेकिन सभी आश्रमों को सफल बनाने के लिये है।

इस सांख्य-योग ध्यान सम्बन्ध के बारे में और कुछ बाद में कहना चाहूँगी। मैं आशा करती हूँ कि इन विचारों को आप विद्वत् गण के समक्ष अवश्य रखेंगे और विज्ञान, ध्यान और समाज के संदर्भ में कुछ लिखने का और एक मौका देंगे।

-विनीता आर्या, मुम्बई।

७. आप द्वारा प्रकाशित 'पाक्षिक परोपकारी' पत्रिका इस गुरुकुल में नियमित रूप से मिल रही है और गुरुकुल के पुस्तकालय की भी शोभा बढ़ा रही है। इसमें प्रकाशित सभी लेख अत्यन्त सराहनीय हैं। मैं विशेष रूप से प्रो. राजेन्द्र जिज्ञासु को नमन करना चाहता हूँ जो कि अपने स्पष्ट एवं सटीक लेख, ''कुछ तड़प-कुछ झड़प'' के द्वारा वैदिक विद्वानों का मार्गदर्शन करते रहते हैं। वास्तव में परोपकारिणी सभा महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के मिशन को आगे बढ़ाकर अर्वाचीन युग के भटके हुए असंख्य युवक-युवतियों को नैतिक चेतना से अवगत ही नहीं करा रही, अपितु उनमें जागृति भी ला रही है। इसके अतिरिक्त वेदों में वर्णित ज्ञान-विज्ञान की बातें, विश्वशांति, विश्वबन्धुत्व, विश्वकल्याण, राष्ट्रीय उन्नति तथा पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक उन्नति का आप द्वारा संचालित उपर्युक्त पाक्षिक पत्रिका में पूर्णरूपेण समावेश है, जोकि अपने आप में गागर में सागर है।

-सूबेदार मेजर (सेवानिवृत्त) एन.आर.डांगी (आर्य), कोषाध्यक्ष, आर्य कन्या गुरुकुल, हसनपुर, पलवल, हरि., चलभाष-८०५३६२१४४२, फैक्स-०१२७५-२७१८३१ ईमेल-nannuramdangi@gmail.com

८. आदरणीय धर्मवीर जी, सप्रेम नमस्कार। परोपकारिणी सभा के मुख पत्र पाक्षिक 'परोपकारी' का मार्च (प्रथम) २०१३ अंक में आपका लेख 'भाषा:एक को उपयोग में लज्जा आती है, दूसरा इससे घृणा करता है' पढ़ा। आपने इस लेख द्वारा वर्तमान में भारत में राष्ट्रभाषा हिन्दी की हो रही दुर्दशा से सभी को अवगत करवाया। इसके साथ ही आपने अभ्यासपूर्ण ढंग से इस लेख को प्रस्तुत किया है, जो अत्यन्त सराहनीय है। इस लेख को पढ़ने के पश्चात् लोगों की विचार प्रक्रिया निश्चित ही आरम्भ होगी। आप इसी प्रकार राष्ट्रहित कार्य में अपना योगदान देते रहें, यही ईश्वर चरणों में प्रार्थना है।**-डॉ. आशा ठक्कर, 'सनातन आश्रम' २४/ब रामनाथी, बांदोड़ा, फोंडा, गोवा, दूरभाष-०८३२-२३१२३३४, फैक्स-२३१८१०८, ईमेल-Sanatantrust@rediffmail.com, Website: www.Sanatan.org**

छपते-छपते-शोक समाचार

आर्यजगत् के मूर्धन्य वैदिक विद्वान् **डॉ. रामनाथ जी वेदालंकार**, हरिद्वार का देहावसान दिनाङ्क ०८.०४.२०१३ को दोपहर १.०० बजे हो गया है। प्रभुकृपा से उन्होंने दीर्घायु पाई, जीवन भर वेद के लिए कार्य किया। परोपकारिणी सभा की हार्दिक संवेदना एवं श्रद्धाञ्जलि।

जो कोई मनुष्य प्रीति से परमेश्वर, सभाध्यक्ष और उत्तम कामों में आज्ञा के पालन के लिये सत्य वाणी और उत्तम विद्या को ग्रहण करता है, वही सबकी रक्षा कर सकता है।**-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद भावार्थ-४.१९।**

संस्था-समाचार

-१५ से ३१ मार्च तक

१. सभा का वेदप्रचार एवं नशामुक्ति कार्यक्रम- परोपकारिणी सभा के तत्त्वावधान में १३ से १९ मार्च २०१३ तक सात दिवसीय वेद प्रचार एवं नशामुक्ति कार्यक्रम का आयोजन किया गया। आचार्य सानन्द (स्नातक, गुरुकुल ऋषि उद्यान), महाशय हीरालाल जी आर्य (भजनोपदेशक तह. नारनौल, महेन्द्रगढ़) व श्री रोहताश मुनि जी ने विभिन्न शिक्षण संस्थानों, आर्यसमाजों, ग्रामों में जाकर नशे से ग्रसित लोगों के लिए भजनोपदेश व प्रवचन का प्रभावशाली कार्यक्रम प्रस्तुत किया।

इसके अन्तर्गत **दिनाङ्क १३** मार्च-को ग्राम-दाँता, अजमेर के 'आर्य नारायणी टी.टी. महाविद्यालय में नशामुक्ति पर भजनोपदेश एवं प्रवचनों से महाविद्यालय के शिक्षक-प्रशिक्षण-ग्राही (बी.एड. के विद्यार्थी) छात्र-छात्राओं को लाभान्वित किया। तत्पश्चात् सायं अजमेर के धौलाभाटा क्षेत्र में एक आर्य परिवार में भजनोपदेश एवं गायत्री मन्त्र के व्यवहारिक स्वरूप के व्याख्यान के माध्यम से उपस्थित आर्यजनों को लाभान्वित किया।

दिनाङ्क १४-को ग्राम-बिड्च्यावास, अजमेर में (इसी बिड्च्यावास ग्राम में आर्यसमाज की महान् विभूति, प्रकाण्ड वैदिक विद्वान् श्री पं. युधिष्ठिर जी मीमांसक का जन्म हुआ था) श्री सत्यनारायण आर्य जी के सहयोग से आयोजित यज्ञ व प्रवचन के कार्यक्रम में पधारी हुई धर्मप्रेमी जनता ने भजनोपदेश व प्रवचनों का लाभ उठाया। इसके बाद ग्राम-राजगढ़ में श्री मुरलीधर जी आर्य के माध्यम से नशामुक्ति व अन्धविश्वास पर भजनोपदेश व प्रवचन का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

दिनाङ्क १५-को कास्था नया गाँव अजमेर में ग्रामीणों के मध्य नशामुक्ति पर भजनोपदेश एवं प्रवचन का कार्यक्रम रखा गया। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत नशामुक्ति हेतु औषधि व इस विषयक विज्ञापन पत्र (पाम्पलेट) भी वितरित किए गए।

दिनाङ्क १६-को आर्यसमाज किशनगढ़ तथा निकटवर्ती कॉलोनी के दो स्थानों पर वेद में आचार संहिता तथा आध्यात्म विषयक भजनोपदेश एवं प्रवचन का कार्यक्रम किया गया। इस कार्यक्रम में स्थानीय सज्जन श्री ओम्प्रकाश जी तोषनीवाल एवं श्री दिनेश मालु जी का सहयोग भी सराहनीय रहा।

दिनाङ्क १७-आर्यसमाज नसीराबाद में 'मानवीय कर्त्तव्य कर्म' विषयक भजनोपदेश एवं प्रवचन का कार्यक्रम रखा गया।

दिनाङ्क १८-केकड़ी (अजमेर) स्थित रेगर व दलित बस्तियों में केकड़ी आर्यसमाज के सहयोग से आकर्षक कार्यक्रम का आयोजन किया गया। यहाँ पर भी नशामुक्ति हेतु औषधि व इस विषयक विज्ञापन पत्र निःशुल्क वितरित किए गए।

दिनाङ्क १९-आर्यसमाज रायला के सहयोग से समीपस्थ गाँव में जनसामान्य के मध्य पुनः नशामुक्ति पर कार्यक्रम तथा औषधि व पाम्पलेट वितरण किया गया।

सभा के इस कार्यक्रम में प्रचारकों के लिए प्रयुक्त 'वेदप्रचार वाहन' ने जहाँ ५५५ कि.मी. की यात्रा की वहीं प्रचार एवं प्रसार सामग्री, ढोलकिया, चालक आदि की भी उचित व्यवस्था सभा द्वारा की गई। महाशय हीरालाल जी आर्य भजनोपदेशक के इस विषयक उत्साह को इसी बात से समझा जा सकता है कि कार्यक्रम के दौरान वितरित सम्पूर्ण नशामुक्ति हेतु औषधि उनकी ओर से पीड़ितों में निःशुल्क वितरित की गई। श्री वासुदेव आर्य (अजमेर) व श्री मोक्षराज जी (अजमेर) ने विभिन्न आर्यसमाजों से सम्पर्क साधने में अपना सहयोग प्रदान किये। इस कार्यक्रम के सफलतापूर्वक पूर्ण होने के उपलक्ष्य में सभा, सभी प्रत्यक्ष-परोक्ष सहयोग कर्त्ताओं को धन्यवाद देती है, आभार व्यक्त करती है।

२. आचार्य सोमदेव जी का सम्मान-१० मार्च २०१३ को 'महाविद्यालय गुरुकुल झज्जर' में वार्षिकोत्सव का आयोजन किया गया, जिसमें मुख्य अतिथि के रूप में श्री भूपेन्द्र जी हुड्डा (मुख्यमन्त्री हरियाणा) आमन्त्रित थे। इस भव्य कार्यक्रम में आचार्य सोमदेव जी (ऋषि उद्यान अजमेर) का नैष्ठिक ब्रह्मचारी पुरस्कार से सम्मान किया गया। जिसमें गुरुकुलवासी, आश्रमवासी व नगर से पधारे धर्मप्रेमी सज्जनों, माताओं, बच्चों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। कार्यक्रम में मुख्यवक्ता के रूप में आचार्य सोमदेव जी को आमन्त्रित किया गया आपने होली का महत्त्व प्रतिपादित करते हुए बताया कि हमें आवश्यकता अपने सिद्धान्तों अर्थात् महर्षि दयानन्द और वेद के रंग में रंगने की है न कि मत-मतान्तरों की भौतिक उन्नति देखकर उनसे रंगने की। जनसामान्य की प्रवृत्ति को दूर करने के लिए आपने बताया कि इन भौतिक रंगों से रंगना क्या रंगना है, ये रंग तो कुछ दिनों में उतर जाएगा, वास्तविक रंगना तो अपने आश्रम धर्म (ब्रह्मचर्य आदि) में ही रंगकर अपने कर्त्तव्य-कर्मों को निष्ठापूर्वक सम्पादित करना है।

श्री रमेश मुनि जी ने लगातार सत्संग करने की प्रवृत्ति के लाभ बताए, श्री बलेश्वर मुनि जी ने इस अवसर पर 'वीर हकीकत राय' के धर्म बलिदान को याद दिलाकर श्रोताओं को भाव-विभोर कर दिया। प्र. श्रद्धानन्द जी ने जनता को जल से प्रेरणा लेकर अपने जीवन को शीतल, पवित्र और नम्र बनाने का निवेदन किया। आचार्य मोक्षराज जी ने वैदिक धार्मिकों के समक्ष उनके विचारों की महत्ता प्रतिपादित की। इस अवसर पर माता उर्मि यति जी, माता ऊषा जी, श्री वासुदेव जी आर्य, ब्र.

सत्यव्रत जी, स्वामी देवानन्द जी (महाराष्ट्र), सुश्री श्वेता आर्या जी ने अपने-अपने सुमधुर भजन भी प्रस्तुत किए। शान्तिपाठ के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ तत्पश्चात् सभी ने भोजन-प्रसाद ग्रहण किया।

३. यज्ञ एवं प्रवचन-जैसा कि विदित है ऋषि उद्यान, आर्यजगत के उन चुने हुए स्थानों में से एक है जहाँ पूरे वर्ष दोनों समय अपरिहार्य रूप से यज्ञ एवं प्रवचन का कार्यक्रम होता है। प्रात:काल यज्ञोपरान्त वेद के कुछ मन्त्रों का क्रमश: पाठ तथा पूर्व निर्धारित मन्त्र का महर्षि दयानन्द कृत भाष्य का स्वाध्याय भी किया जाता है। प्रात: प्रवचन के क्रम में जहाँ डॉ. धर्मवीर जी पुरुषसूक्त (यजु. का ३१वाँ अध्याय) पर व्याख्यान करते हैं वहीं स्वामी विष्वङ् जी अपने योगदर्शन के क्रम को आगे बढ़ाते हैं तथा सायं प्रवचन के क्रम में आचार्य सोमदेव जी ऋग्वेदादि-भाष्य-भूमिका क स्वाध्याय कराते हैं।

दिनाङ्क १८ से २५ मार्च के अपने प्रवचनों में डॉ. धर्मवीर जी ने पुरुषसूक्त के ७वें, ८वें, ९वें मन्त्र की श्रोताओं के मध्य स्पष्ट व्याख्या की। २३ मार्च को शहीद दिवस के उपलक्ष्य में डॉ. साहब ने बताया कि भगतसिंह, सुखदेव, राजगुरु व अन्य क्रान्तिकारियों ने जो कष्ट-पीड़ा उठाई वो बिना ठोस बौद्धिक आधार के सम्भव नहीं है। दुर्भाग्य से कम्युनिष्ट इतिहासकार भगतसिंह आदि को कम्युनिष्ट सिद्ध करने में लगे हैं, किन्तु सच्चाई यह है कि आर्य परिवार में जन्मे भगतसिंह परिवार से प्राप्त अपने इन आर्य सिद्धान्तों को अन्तिम समय तक अपने भीतर दृढ़ रूप में स्थापित करते रहे। आपने इस प्रसङ्ग में 'सिंहावलोकन' नामक पुस्तक के अनेक रोचक उद्धरण भी दिए।

स्वामी विष्वङ् जी ने योगदर्शन तृतीय पाद के १८वें सूत्र की व्याख्या करते हुए बताया कि योगी व्यक्ति अपने संस्कारों पर संयम करके (धारणा, ध्यान व समाधि लगाके) अपने पूर्वजन्मों की घटनाओं को जान लेता है। स्वामी जी ने इस विषयक विद्यार्थियों के प्रश्नों का समाधान भी किया। प्रात: प्रवचन में आर्य जनता को स्वामी चैतन्य मुनि जी (जम्मू), स्वामी आशुतोष जी के उद्बोधन का लाभ भी प्राप्त हुआ।

सायंकालीन प्रवचन के क्रम में आचार्य श्री सोमदेव जी द्वारा ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के उपासना प्रकरण पर प्रवचन के क्रम में आचार्य जी द्वारा 'तस्य वाचक: प्रणव: तज्जपस्तदर्थभावनम्' के माध्यम से बताया कि ईश्वर का मुख्य नाम ओ३म् है और इस 'ओ३म्' का अर्थ और भावना के साथ किया गया जप एकाग्रता सम्पादन, अविद्यादि क्लेशों और सब प्रकार के विघ्नों को नाश करने का वज्ररूप अस्त्र है। सायं सत्र में मध्य-मध्य में आर्यजनों को श्री रमेश मुनि जी, स्वामी देवानन्द जी (महाराष्ट्र) आदि विद्वानों के वक्तव्य का भी लाभ हुआ।

-आचार्य सानन्द, ब्र. रविशंकर, दीपक आर्य।

सत्यार्थप्रकाश प्रचार निधि दानदाता

दिनांक १६ जनवरी से ३१ मार्च २०१३ तक

१. डॉ. दिनेश मून्दड़ा, २. कैलाश बखनिया, उज्जैन, ३. सदाशिव, उज्जैन, ४. मुमुक्षु मुनि, अजमेर, ५. सुशीला देवी, हिसार, ६. सुशीला देवी ख्यालिया, हिसार, ७. मदनलाल तंवर, जोधपुर, ८. इन्द्रप्रकाश आर्य, जोधपुर, ९. अशोक देवड़ा, जोधपुर, १०. कैलाश चन्द्र आर्य, जोधपुर, ११. विजयसिंह भाटी, जोधपुर, १२. दिनेश शर्मा, जोधपुर, १३. जोगेन्द्रसिंह, पानीपत, १४. आर.आर. नागर, उधमसिंह नगर, उत्तराखण्ड, १५. लालसिंह मास्टर, कनीना, १६. डॉ. प्रह्लाद भाई ठक्कर, अहमदाबाद, १७. मास्टर कर्नल सिंह आर्य, चरखी दादरी, भिवानी, १८. सोमदेव आर्य, अजमेर, १९. द्वारका प्रसाद रावत, सोनीपत, हरियाणा, २०. इन्द्रजित देव, हरियाणा, २१. आर्यसमाज, नसीराबाद, २२. गंगाधर सिंह, कोरवा, छत्तीसगढ़, २३. अमरेन्द्र, रुड़की, हरिद्वार, २४. आर्यसमाज मन्दिर, सरोजनी नगर, नई दिल्ली।

कृपया ''परोपकारी'' पाक्षिक शुल्क, अन्य दान व वैदिक-पुस्तकालय के भुगतान इलेक्ट्रोनिक मनीऑर्डर से ना भेजें

निवेदन है कि ई.एम.ओ. द्वारा ''परोपकारी'' शुल्क, अन्य दान व वैदिक पुस्तकालय के पुस्तकों के भुगतान भेजने का कष्ट न करें, क्योंकि इस फार्म में न तो ग्राहक संख्या का उल्लेख होता है और न ही पैसे भेजने के उद्देश्य का। सभा कर्मचारी उचित खाता शीर्ष में राशि नहीं जमा कर पाते हैं क्योंकि पैसे भिजवाने का उद्देश्य ज्ञात नहीं हो पाता है। इस मनीऑर्डर फार्म में संदेश का स्थान रिक्त रहता है। कृपया साधारण एम.ओ. द्वारा ही राशि भिजवाने का कष्ट करें तथा फार्म में संलग्न समाचार वाली स्लिप पर ग्राहक संख्या, दान सम्बन्धी सूचना व पुस्तकों के विवरण का अवश्य उल्लेख करें। **यदि ई.एम.ओ. से भेजना है तो संपूर्ण स्पष्ट विवरण लिखा पत्र भी अलग से अवश्य प्रेषित करें।**

-व्यवस्थापक

आर्यजगत् के समाचार

१. आर्यसमाज, सागरपुर (नई दिल्ली-४६) का ३३वाँ वार्षिकोत्सव अत्यन्त हर्षोल्लास के साथ चैत्र शुक्ल अष्टमी, नवमी व दशमी सं. २०७० वि. तदनुसार शुक्रवार, शनिवार एवं रविवार दिनांक १९, २० व २१ अप्रैल २०१३ को मनाया जा रहा है। कार्यक्रम में उपदेशक श्री रामसुफल शास्त्री हाँसी (हिसार), भजनोपदेशक श्री सत्यपाल 'सरल' देहरादून को आमन्त्रित किया गया है साथ में क्षेत्र के जनप्रतिनिधि, नेतागण व अनेक गणमान्य व्यक्तियों को भी आमन्त्रित किया गया है। कार्यक्रम समापन पर ऋषिभोज का भी आयोजन किया गया है। आप सभी परिवार व इष्ट मित्रों सहित सादर आमन्त्रित हैं।

२. आध्यात्म पथ, सुन्दर पैलेस, पश्चिम विहार, नई दिल्ली-प्रख्यात साहित्यकार एवं सुप्रसिद्ध वैदिक विद्वान् डॉ. सुन्दरलाल कथूरिया के सद्यः प्रकाशित ग्रन्थ **'शून्य से शिखर तक-स्वामी श्रद्धानन्द'** का लोकार्पण मूर्धन्य सन्यासी स्वामी (डॉ.) आर्येश आनन्द सरस्वती (मनन-आश्रम, पिण्डवाड़ा, राज.) ने किया। प्रख्यात वैदिक विद्वान् एवं 'अध्यात्म-पथ' के यशस्वी सम्पादक आ. चन्द्रशेखर शास्त्री जी ने कहा कि अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन में दुर्घटनाग्रस्त हो जाने के बाद उपचार शैय्या पर बैठे-बैठे अल्पावधि में डॉ. कथूरिया ने इस तथ्यात्मक ग्रन्थ की रचना की है, यह उनकी विद्वत्ता और प्रतिभा का प्रमाण है। ग्रन्थ प्रेरक, उद्‍बोधक, पठनीय और मननीय है। आर्यसमाज, बी-ब्लॉक, जनकपुरी के युवा धर्माचार्य आ. योगेन्द्र शास्त्री ने कहा कि सरल, सुबोध एवं रोचक शैली में लिखित इस ग्रन्थ में स्वामी जी के विषय में प्रचलित अनेक भ्रान्तियों का निराकरण करते हुए डॉ. कथूरिया ने उनकी शून्य से शिखर तक की यशोगाथा को बीच-बीच में काव्यात्मक उद्धरणों से चित्रित किया है। उनके इस श्रमसाध्य कार्य का आर्यजगत् में बहुत सम्मान होगा, ऐसा मेरा विश्वास है। ग्रन्थ का लोकार्पण आर्यसमाज, बी-ब्लॉक, जनकपुरी के चार दिवसीय वेदप्रचार समारोह के समापन के अवसर पर विशाल जन समुदाय की उपस्थिति में हुआ। कार्यक्रम की अध्यक्षता सुप्रसिद्ध समाजसेवी श्री के.एल.गुप्ता ने की। मुख्य अतिथि के रूप में श्री रामनाथ जी सहगल (मन्त्री, टंकारा ट्रस्ट एवं उपप्रधान, डी.ए.वी. प्रबन्धकर्तृ समिति) एवं ऋषि चन्द्रमोहन खन्ना (अध्यक्ष, महर्षि दयानन्द धर्मार्थ पुस्तकालय एवं शोधकेन्द्र) तथा विशिष्ट अतिथि के रूप में श्री डालेश त्यागी एवं श्री वेदप्रकाश की उपस्थिति गरिमापूर्ण रही। अन्त में डॉ. कथूरिया ने सभी के प्रति आभार व्यक्त किया।

३. प्रि. चित्रा नाकरा जी की इज़रायल यात्रा-प्रख्यात शिक्षाविद्, वैदिक संस्कृति एवं मूल्यों के प्रति अगाध-निष्ठावान्, शिक्षा के क्षेत्र में राष्ट्रपति पदक तथा अन्य अनेकों पुरस्कारों एवं सम्मानों से विभूषित वेदव्यास डी.ए.वी. स्कूल की प्रधानाचार्या ''श्रीमती चित्रा नाकरा जी'' इज़रायल सरकार के विशेष अनुरोध पर भारत सरकार द्वारा प्रेषित उस विशिष्ट प्रतिनिधि मण्डल के प्रतिनिधि सदस्य रही जिन्होंने इज़राइल की विशेष शैक्षणिक यात्रा की। उनके अनुसार इज़राइल के लोगों के हृदय में भारत देश के प्रति अपार सम्मान एवं स्नेह के भाव विद्यमान है। यहूदी समुदाय स्वयं को भारतीय वंश परम्परा में प्रख्यात चक्रवर्ती सम्राट ''यदु'' का वंशज अनुभव करता है।

अपनी संस्कृति एवं मूल्यों के रक्षण में इज़रायल के लोग सतत क्रियाशील है, वह जागे हुए योद्धाओं का देश है। उनमें राष्ट्रप्रेम तथा देशभक्ति कूट-कूट कर भरी हुई है। वहाँ के लोग अपनी संस्कृति, सभ्यता तथा भाषा पर गर्व का अनुभव करते हैं। 'हिब्रू' वहाँ की राष्ट्रभाषा है जो वैदिक भाषा के अति निकट है। उन लोगों ने अपने बलबूते पर रेगिस्तान के बंजर-बिहड़ों को शस्य श्यामला भूमि में परिवर्तित कर दिया। वे अपने संयन्त्रों से सागर के खारे पानी को मीठे पानी में बदल कर अपने देशवासियों की प्यास बुझा रहे हैं। हरित ग्रहों (ग्रीन हाऊस) में वे फल-फूल अनाज आदि का अति वैज्ञानिक विधि द्वारा उत्पादन करते हैं। वहाँ का बच्चा-बच्चा अपनी पुरातन संस्कृति तथा अपने देश को स्वाभिमान एवं स्वतन्त्रता के दिव्य शिखरों पर सुशोभित करना चाहता है। इज़रायल से हमारे देशवासी अनुशासन, कर्त्तव्यनिष्ठा, देश भक्ति तथा विपरीत परिस्थितियों में भी जीवित रहने के लिए अदम्य जिजीविषा की शक्ति और शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं।

प्रि. चित्रा नाकरा जी जो आर्यसमाज की प्रधाना भी है ने वहाँ आयोजित सेमीनार में वेद की पवित्रतम ऋचा ''शान्ति मन्त्र'' का पाठ तथा उसकी शिक्षाओं पर अपने विशेष विचार रखे जिसे सुनकर सारा प्रतिनिधि मण्डल तथा इज़रायल वासी लोग भाव विभोर हो गये। दस दिन की यात्रा से प्राप्त अनुभव सुख, शान्ति, समृद्धि, अदम्य साहस, शौर्य तथा देशभक्ति की भावनाओं को प्रखरतम बनाती रहेगी।

४. गुरुकुल आश्रम, परली-वैजनाथ में 'महाशय धर्मपाल (एम.डी.एच.) आर्य वेदव्यास वानप्रस्थाश्रम' का उद्‍घाटन सम्पन्न-महाराष्ट्र के परली-वैजनाथ (जि. बीड़) स्थित स्वामी श्रद्धानन्द गुरुकुल आश्रम में आर्यजगत् के दानवीर

भामाशाह तथा एम.डी.एच. उद्योगसमूह के चेअरमैन श्री महाशय धर्मपाल जी द्वारा प्रदत्त १६ लाख रुपयों की पावन दानराशि से नवनिर्मित भव्य '**महाशय धर्मपाल आर्य वेदव्यास वानप्रस्थाश्रम**' भवन के उद्घाटन अवसर पर 'उद्घाटक' के रूप में श्री विनयजी ने कहा कि वेदधर्म के प्रचार से वानप्रस्थियों का योगदान प्रेरणाप्रद है। उपरोक्त वक्तव्य दे रहे थे। यह उद्घाटन समारोह गत रविवार दिनांक २४ फरवरी, २०१३ को पूर्व केन्द्रीय राज्यमन्त्री श्री जयसिंहराव गायकवाड़ (पाटिल) की अध्यक्षता में उत्साह के साथ सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर सर्वश्री रवि सचदेवा (एम.डी.एच. हिमाचल प्रबन्धक), मनोज गुलाटी (संचालक-टूर एण्ड टैवल्स, दिल्ली), आर्य भजनोपदेशक पं. सुरेन्द्रपाल आर्य (नागपुर), स्वामी सत्यव्रतानन्द सरस्वती (बुरहानपुर, म.प्र.) आदि प्रमुख अतिथि के रूप में उपस्थित थे।

महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा एवं आर्यसमाज परली के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित इस समारोह में राज्य के विभिन्न आर्यसमाजों के पदाधिकारी, कार्यकर्ता तथा आर्य नर-नारी भारी संख्या में पधारे थे। उदारमना आर्य सेवी महाशय धर्मपाल जी की दातृव्य परम्परा में पहली बार महाराष्ट्र की आर्यसंस्था गुरुकुल, परली को यह सहयोग मिला है। इस वानप्रस्थ आश्रम का नामकरण भी उसी भावना को ध्यान में रखकर '**महाशय धर्मपाल (एम.डी.एच.) आर्य वेदव्यास आश्रम**' इस रूप में किया है। इस समारोह में महाशय धर्मपाल जी, आचार्य बलदेव जी, प्रकाश आर्य आदि मान्यवरों का आना तय हुआ था, किन्तु किन्हीं कारणों से वे नहीं आ सके।

प्रातः १०.०० बजे नूतन वानप्रस्थ भवन में पं. सुधाकर शास्त्री के ब्रह्मत्व में उद्घाटन यज्ञ सम्पन्न हुआ, जिसमें उपर्युक्त मान्यवर अतिथिगण यजमान के रूप में सम्मिलित हुए। तत्पश्चात् सभा व आर्यसमाज-पदाधिकारियों की उपस्थिति में नाम फलक का उद्घाटन किया गया। प्रमुख अतिथि श्री सचदेवा एवं श्री गुलाटी ने नया वानप्रस्थाश्रम भवन मुनिजनों के लिए आत्मिक उन्नति में सहायक हो, यह अभिलाषा व्यक्त की।

पं. सुरेन्द्रपाल जी ने आर्यों को हाल और चाल याने कि शारीरिक स्वास्थ्य के साथ ही चारित्रिक शुद्ध जीवन का ध्यान रखने की बात कही। अध्यक्षीय समापन भाषण में पूर्व केन्द्रीय राज्यमन्त्री श्री जयसिंह राव जी गायकवाड़ पाटिल ने आर्यसमाज को क्रान्तिकारी ऊर्जास्रोत बताया। उन्होंने कहा-'देश की पतनावस्था को बचाने के लिए एकमात्र आर्यसमाज ही समर्थ पर्याय है। ईश्वरीय पावन वेदज्ञान के आधार पर यह संस्था समग्र संसार को मानवता का पथ दर्शाती है। इसके प्रसार के लिए धन के साथ समय देना भी अत्यन्त आवश्यक है।'

इस पावन अवसर पर पू. स्वामी श्रद्धानन्दजी (हरिशचन्द्र गुरुजी) के पांच शिष्य सर्वश्री डॉ. देवीदास राव नवलकेले-मुम्बई, डॉ.बी.एम.मेहेत्रे-हैदराबाद, प्रा. डॉ. शेषराव वांजरखेडे-बिदर, शिवराज धरणे-बैंगलोर, राजेश भागवत-पुणे इन पांच होनहार शिष्यों का अभिनन्दन किया गया। साथ ही वानप्रस्थाश्रम में दीक्षित कपिलमुनि, वेदमुनि, श्रेष्ठमुनि, वशिष्ठमुनि तथा श्रीमती मैत्रेयी यति इन मुनियों का, विभिन्न दानदाताओं व सहयोगी कार्यकर्त्ताओं का सम्मान भी किया गया।

आरम्भ में कार्यक्रम की प्रस्तावना रखते हुए मुख्य संयोजक डॉ. ब्रह्ममुनि जी ने गुरुकुल आश्रम में चल रहे कार्यकलापों की जानकारी देते हुए दानदाताओं के प्रति धन्यवाद प्रकट किये। सभा के उपप्रधान श्री दयाराम बसैये (बन्धू) ने आर्यों से दान की अपील की। इस समारोह में साप्ताहिक लातूर समाचार के **महर्षि दयानन्द स्मृति अंक,** वैदिक गर्जना मासिक के **माता कैलाश भसीन गौरव विशेषांक** का विमोचन, विभिन्न प्रतियोगिताओं में विजेता छात्रों को पुरस्कार वितरण आदि कार्यक्रम भी सम्पन्न हुए।

इस अवसर पर सर्वश्री सभाप्रधान स्वामी श्रद्धानन्द, कार्यकारी प्रधान बलिराम पाटिल, मन्त्री राजेन्द्र दिवे, उपप्रधान योगमुनि, उपमन्त्री प्रा. देवदत्त तुंगार, प्रा. डॉ. प्रकाश कदम, आर्यसमाज के प्रधान श्री रामपाल लोहिया, प्रो. ओमप्रकाश होलीकर, स्वा. सै. प्रेमचन्द्र 'प्रेम', जुगलकिशोर लोहिया, सोममुनि, विज्ञानमुनि आदि महानुभाव उपस्थित थे। समारोह का संचालन डॉ. नयनकुमार आचार्य व अभिनन्दन पत्र वाचन प्रशांतकुमार शास्त्री ने किया तथा धन्यवाद प्रस्ताव तानाजी शास्त्री ने किया। इस उद्घाटन के साथ ही माता शान्तिदेवी मायर स्मृति में त्रिदिनात्मक विश्वशान्ति यज्ञ का आयोजन किया गया था, जिसके ब्रह्मा पद को प्रो. डॉ. धर्मवीर जी (कार्यकारी प्रधान, परोपकारिणी सभा, अजमेर), पं. सुधाकर शास्त्री ने सुशोभित किया। राज्यस्तरीय आर्य कार्यकर्ता संगोष्ठी में भी विनय आर्य, गायकवाड़ आदियों ने कार्यकर्ताओं को प्रभावपूर्ण रीति से सम्बोधित किया।

५. नशामुक्ति अभिप्रेरणा शिविरों का आयोजन- ऋषि उद्यान अजमेर के आचार्य सानन्द जी की प्रेरणा से संचालित दुर्व्यसन मुक्ति मंच देई जिला बून्दी द्वारा गाँव-गाँव जाकर वीडियो फिल्म व बैनरों के माध्यम से लोगों को नशे के दुष्प्रभाव व उससे मुक्ति के उपाय बताए जा रहे हैं। दुर्व्यसन मुक्ति मंच के संयोजक लादूलाल सेन ने बताया कि ७ मार्च, २०१३ को महर्षि दयानन्द सरस्वती के जन्म दिवस पर कोली मोहल्ला देई (बून्दी) में नशामुक्ति अभिप्रेरणा शिविर आयोजित किया जिसमें महर्षि के जीवन चरित्र पर प्रकाश डालते हुए लोगों को नशामुक्ति का सङ्कल्प दिलाया व निःशुल्क औषधियाँ दी गई।

१० मार्च, २०१३ को महर्षि दयानन्द बोध पर्व के अवसर पर गुढ़ा गोपाल जी नामक गाँव में आयोजित शिवरात्रि मेले में चित्र प्रदर्शनी के व्याख्यान द्वारा लोगों को नशा त्यागने हेतु प्रेरित

किया गया।

१२ मार्च, २०१३ को ''विश्व धूम्रपान दिवस'' के अवसर पर करवर कस्बे में रात्रि को एक विशाल ''नशा मुक्ति मोटीवेशन केम्प'' का आयोजन किया गया जिसमें प्रोजेक्टर के माध्यम से नशे के दुष्प्रभाव पर प्रकाश डाला गया व नशा मुक्ति के उपाय बताए गए। लोगों को प्रातः निःशुल्क औषधियाँ वितरित की गई।

उक्त शिविरों के माध्यम से १६५ लोगों को गुटखा, बीड़ी, शराब जैसे दुर्व्यसनों से मुक्त किया गया है। परोपकारिणी सभा द्वारा प्रकाशित पत्रक व बैनर इसमें काफी सहायक रहे हैं। इस कार्य में शिक्षक, प्रभुलाल मीणा, रमेश शर्मा, लक्ष्मीकान्त वर्मा, प्रकाश नागर, व कन्हैयालाल नशामुक्ति प्रचारक की सराहनीय भूमिका निर्वाह कर रहे हैं।

६. आर्यसमाज सज्जननगर, उदयपुर में रविवार १० मार्च को प्रधान श्री हुकमचन्द शास्त्री जी की अध्यक्षता में ऋषि बोधोत्सव मनाया गया। प्रारम्भ में ब्रह्मचारी सौरभदेव आर्य के पौरोहित्य में देवयज्ञ हुआ। यजमान श्री आचार्य सुनील कुमार मिश्र एवं श्रीमती रजनी मिश्रा थे।

भजनोपदेशक श्री रवीन्द्र तिवारी ने बोधोत्सव सम्बन्धी भजनों से श्रोताओं को भाव विभोर कर दिया। तबले पर संगत आचार्य सुनील कुमार मिश्र ने की। मुख्य अतिथि श्रीमती रुचिका शर्मा, गुड़गांव (हरियाणा) ने अपना उद्बोधन दिया। आचार्य प्रमोद शास्त्री ने पुराण व वेद विषयक शंङ्का समाधान कर संगठन सूक्त व आर्यसमाज के दस नियमों का पाठ किया। अन्त में शान्तिपाठ व जयघोषों के साथ ऋषि बोधोत्सव सम्पन्न हुआ।

७. मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल स्कूल, ढ़ीकली, उदयपुर-७ मार्च २०१३ को विद्यालय में **महर्षि दयानन्द सरस्वती जयन्ती उत्सव** शिविर पंचाङ्ग के अनुसार मनाया गया जिसकी अध्यक्षता प्रधानाध्यापक श्री मगनलाल जोशी जी ने की। कार्यक्रम का संयोजन श्री हुकमचन्द शास्त्री जी ने किया। श्री गोपाल कृष्ण पूर्बिया, पंकज जोशी, अमृत मीणा, ताराचन्द बुलानिया, ओमप्रकाश सोलंकी, रामचन्द्र मेनारिया, तारासिंह बड़गुर्जर का सहयोग प्रशंसनीय रहा। अन्त में शान्ति पाठ और जयघोषों के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ।

८. आर्यसमाज मन्दिर, सागरपुर, नई दिल्ली-महर्षि दयानन्द सरस्वती का १८९वाँ जन्मोत्सव दिनांक ३ मार्च २०१३ को एवँ बोधोत्सव दिनांक १० मार्च, २०१३ को आर्यसमाज मन्दिर प्राँगण में अत्यन्त हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। भजनीक सर्व श्री सागरकुमार शास्त्री व बच्चूसिंह आर्य व उपदेशक आचार्य रामनिवास 'गुणग्राहक' द्वारा क्रमशः महर्षि गाथा व उनकी जीवनी से सम्बन्धित प्रसंग सुनाये। कार्यक्रम के पश्चात् मुख्य अतिथियों में हरवन्स ज्वैलर्स, मनी ज्वैलर्स, शिव शक्ति ज्वैलर्स व श्री ज्वैलर्स को उनके सहयोग के प्रति आभार प्रकट करते हुए उनको शॉल, स्वामी जी का चित्र व पटका पहनाकर सम्मानित किया किया गया।

९. आर्यसमाज रामपुरा द्वारा संचालित मातृ सेवा सदन बालिका उच्च प्राथमिक विद्यालय, कोटा में प्रातः १० बजे से ऋषि बोध उत्सव बड़ी धूमधाम व उल्लासपूर्वक मनाया गया। विद्यालय के व्यवस्थापक डी.पी. मिश्रा ने प्रेस विज्ञप्ति जारी करते हुए बताया कि उत्सव के प्रमुख वक्ता श्री प्रेमनाथ कौशल थे। अध्यक्षता श्री राजेन्द्र सक्सेना ने की। इस अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान के कार्यसमिति सदस्य श्री रघुवीरसिंह कुशवाह, श्री इन्द्रकुमार सक्सेना भी उपस्थित थे। आर्यसमाज के प्रांगण में सैकड़ों छात्र-छात्राओं को सम्बोधित किया। इस अवसर पर छात्र-छात्राओं ने भी कविता एवं भाषण के माध्यम से अपने विचार व्यक्त किये। भजनोपदेशिका श्रीमती मृदुला सक्सेना ने ''सौ बार जन्म लेंगे एहसान दयानन्द के फिर भी अदा न होंगे'' सुनाया जिसे श्रोताओं ने खूब सराहा। अन्त में शान्ति पाठ के पश्चात् कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

१०. आर्यसमाज जिला सभा कोटा द्वारा समाज सेवा के लिये समर्पित व्यक्तित्व **भीमसेन साहनी** किशोरपुर स्थित गोविन्दधाम में सम्मानित किया गया। श्री साहनी को समाज सेवी डॉ. वेदप्रकाश गुप्ता द्वारा शॉल ओढ़ाकर, वैदिक विद्वान् एवं आर्यसमाज विज्ञान नगर के पूर्व प्रधान डॉ. के.एल. दिवाकर द्वारा गायत्री मन्त्र से सुसज्जित रेशमी केसरिया दुपट्टा पहनाकर एवं आर्यसमाज जिला सभा कोटा के प्रधान अर्जुन देव चड्ढा व उपस्थित आर्य जनों ने स्मृतिचिह्न प्रदान कर मन्त्रोचारण के साथ सम्मानित किया।

११. विश्व महिला दिवस पर महिलाओं का सम्मान-आर्यसमाज जिला सभा, कोटा एवं आर्यसमाज विज्ञान नगर कोटा के संयुक्त तत्वावधान में महिला दिवस के अवसर पर आर्यसमाज सभा भवन पर नित्य योग करने वाली महिलाओं के बीच कार्यक्रम आयोजित किया गया। इस अवसर पर उपस्थित महिलाओं को अतिथियों ने स्मृति चिह्न भेंट किये। कार्यक्रम के संयोजक राकेश चड्ढा ने आभार प्रकट किया। शान्ति पाठ के साथ कार्यक्रम का समापन किया गया। कार्यक्रम में राजेश्वरी देवी, पुष्पानाथ, निहारिका त्रिपाठी, चन्द्रप्रभा, सविता जैन, कृष्णा सांगर, इन्दिरा त्रिवेदी, शमसाद सेठ, कमला शर्मा, श्यामा गोयल, गायत्री देवी सहित कई महिलाएं उपस्थित थीं।

१२. आर्यसमाज जिला सभा, कोटा एवं आर्यसमाज विज्ञान नगर, कोटा के संयुक्त तत्वावधान में महर्षि दयानन्द सरस्वती का १८९वाँ जन्मोत्सव गुरुवार को विज्ञान नगर स्थित राजीव प्लाजा पर श्रद्धापूर्वक मनाया गया। इस अवसर पर आर्यसमाज के कार्यकर्ताओं और गणमान्य नागरिकों ने यज्ञ में

आहुतियाँ दी तथा भजनों के द्वारा स्वामी दयानन्द को याद किया गया। कार्यक्रम में पं. बिरधीचन्द शास्त्री, जिला सभा के प्रधान अर्जुनदेव चड्ढा, जे.एस. दुबे, विज्ञान नगर के प्रधान सुमेश गांधी, राकेश चड्ढा, श्रीचन्द गुप्ता, क्षेत्रपाल आर्य, अरविन्द पाण्डेय, शिवराज विशिष्ठ, कर्णसिंह, प्रभुसिंह कुशवाह, बनवारी लाल सिंघल, हरिदत्त शर्मा, चन्द्रमोहन कुशवाह एडवोकेट, रामदेव शर्मा, सरदार प्रीतपाल सिंह कोहली समेत विभिन्न आर्यसमाजों के कई लोग व गणमान्य नागरिक मौजूद थे।

जे.एस. दुबे ने महर्षि के जीवन पर आधारित एक से बढ़कर एक भजनों की सुमधुर प्रस्तुति दी। उन्होंने 'दुनिया वालों देव दयानन्द दीप जलाने आया था, भूल चुके थे राहें अपनी वह दिखलाने आया था...', 'पूजनीय प्रभु हमारे भाव उज्ज्वल कीजिए....' सहित कई भजनों की प्रस्तुति से श्रद्धा का उल्लास घोला। शांतिपाठ से कार्यक्रम का समापन किया गया।

१३. परोपकारिणी सभा, ऋषि उद्यान, अजमेर से **आचार्य सत्यप्रिय जी आर्य** ने जिला **बैतुल के सारनी शहर (म.प्र.)** में शिवरात्रि पर्व के उपलक्ष में तीन दिन ७ से ९ मार्च तक यज्ञ, हवन, प्रवचन एवं सत्संग का कार्य और वैदिक धर्म का प्रचार किया, जिससे अनेक लोग लाभान्वित हुए। इसके लिए हम परोपकारिणी सभा एवं महर्षि दयानन्द गुरुकुल के आभारी हैं, और धन्यवाद देते हैं । अपेक्षा है कि इस तरह के विद्वान् समय-समय पर उपलब्ध कराते रहें और सभी को लाभान्वित करने के लिए आते रहें। कार्यक्रम के आयोजक-प्रेमलाल आर्य, दिनेश आर्य एवं समस्त आर्य संगठन का इस कार्यक्रम में सहयोग रहा है।

१४. आर्यसमाज कैथल शहर ने अपना **१०८वाँ वार्षिक उत्सव** दिनांक ७ से १० मार्च, २०१३ तक बड़े धूमधाम से मनाया। शुरुआत समाज के सुयोग्य पुरोहित राजेन्द्र कौशिक ने देवयज्ञ से की। तदोपरान्त अजमेर से पधारे सुप्रसिद्ध विद्वान् धर्मवीर आर्य जी के नियमित चार दिन तक सरल, सरस एवं प्रभावपूर्ण प्रवचन सुनकर सैकड़ों श्रोतागण लाभान्वित हुए। भिवानी से पधारे भजनोपदेशक ज्ञानेन्द्र तेवतिया जी के सुमधुर भजन एवं ओजस्वी कथन से सभी श्रोतागण मन्त्रमुग्ध थे। दिल्ली से पधारे वैदिक प्रवक्ता ओम्प्रकाश शास्त्री ने भी अपना वक्तव्य दिया। अन्त में आर्यसमाज के प्रधान पवन आर्य (खनौरी वाले) ने सबका धन्यवाद करते हुए भविष्य में भी इस तरह के कार्यक्रमों का आयोजन करते रहने का आश्वासन दिया।

१५. आर्यसमाज रामां मण्डी, जिला-बठिंडा (पंजाब)-प्रधान सतपाल आर्य व सभी सभासदों की अथाह श्रद्धा-विश्वास व लगन से ऋषि-बोधोत्सव कार्यक्रम पूर्ण हुआ। डॉ. प्रमोद जी योगार्थी, महर्षि दयानन्द ब्रह्म महाविद्यालय हिसार वाले ने यज्ञ ब्रह्मा के पद को सुशोभित किया।

१६. विश्व शान्ति एवं मानव कल्याणार्थ यजुर्वेद पारायण यज्ञ-जयपुर : वैदिक विधि विधान एवं कर्मकाण्ड के प्रति आकर्षण व श्रद्धा अब पौराणिक जगत एवं सामाजिक संगठनों को भी आकृष्ट करने लगे हैं। इसका ताजा उदाहरण मानसरोवर कॉलोनी के '**डे केयर सेन्टर**' में वरिष्ठ जनों की संस्था **सीनियर सिटीजन फोरम** द्वारा आहूत यजुर्वेद पारायण यज्ञ है। आर्यसमाज जयपुर दक्षिण के संयोजन में दिनाक ७ से १० मार्च २०१३ तक विश्व कल्याणार्थ यजुर्वेद पारायण यज्ञ सम्पन्न हुआ।

शोक-समाचार

१७. आर्यसमाज बड़नगर-पूर्व पुस्तकाध्यक्ष माधवलाल सोनी के प्रिय अनुज बड़नगर के लोकप्रिय, मिलनसार अध्यापक मोहनलाल सोनी का गत २७ जनवरी को उज्जैन में निधन हो जाने पर श्रद्धाञ्जलि देते हुए ईश्वर से आत्मशान्ति हेतु सामूहिक प्रार्थना की, साथ ही पुष्पाञ्जलि अर्पित की। ❋

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं**। अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हो। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें**। लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं**। स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें।

-संपादक

लाला शिवलाल उपदेशक
२५ जुलाई १८६४ - ११ मई, १९३५

आपका जन्म श्रावण कृष्ण सप्तमी संवत् १९२१ (२५ जुलाई १८६४) सोमवार को पलवल में हुआ। आपने उर्दू, हिन्दी मिडिल तक शिक्षा पायी। आपका विवाह सन् १८७९ में श्रीमती आनन्दी देवी के साथ हुआ। आपको युगप्रर्वतक महर्षि दयानन्द सरस्वती के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ था और फलस्वरूप आपने न केवल आर्य समाज की सदस्यता ग्रहण की अपितु वेद प्रचारक भी बने। आप वैश्य महासभा मेरठ व अनाथालय अजमेर से जुड़े व उपदेशक का कार्य किया। आपकी कुल आयु समाज सेवा में व्यतीत हुई। आपकी मृत्यु वैशाख सुदी अष्टमी संवत् १९९२ (११ मई १९३५) को अजमेर में हुई।

लाला शिवलाल योग व प्राणविद्या के आचार्य स्वामी सत्यबोध सरस्वती के पितामह थे। स्वामी सत्यबोध जी के बड़े भ्राता श्री भूषण गुप्ता वैदिक साहित्य के अध्येता एवं वेद भाष्यकर्ता थे।

आर जे/ए जे/80/2013-2014 तक   प्रेषण : १५ अप्रैल, २०१३   RNI. NO. ३९५९/५९

लाला शिवलाल गुप्त

प्रेषकः

परोपकारिणी सभा

दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर

(राजस्थान) - ३०५००१

आवरण : © MITTAL 9829797513